अरंडी - उत्पादन बढ़ाने के उपाय

प्रद्युम्न यादव, एच.पी.मीना, एम.पद्ममय्या जे.जवाहर लाल एवं सतीश कुमार

भूमिका :

भारत दुनियॉ के अरंडी उत्पादक देशों में अग्रणी स्थान रखता है । अरंडी के अखाद्य तेल की वैश्विक स्तर पर अच्छी मांग है । इसके तेल में ओसतन 82-88 प्रतिशत तक रिसिनालिक अम्ल होता है । अरंडी का तेल मुख्यत: ओद्योगिक उत्पाद जैसे आंयल, पेंट, वार्निस, साबुन, प्लास्टिक, ग्रीस, घर्षण तेल व श्रृगार उत्पादकों को बनाने में किया जाता है ।

अरंडी की खली एक बेहतर जैविक खाद के रूप में उपयोग की जा सकती है । इसका उपयोग पशु आहार के रूप में नहीं करना चाहिए क्योंकि इसमें रिसीन नामक जहरिला पदार्थ पाया जाता है । अरंडी के पत्तो से रेशम उत्पादन के लार्वा को भी पाला जा सकता है ।

खेती के क्षेत्र :

भारत में मुख्य रूप से यह आन्द्र प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र व उड़िसा में उगाई जाती है । केवल गुजरात व राजस्थान में ही अरंडी की सिंचित खेती की जाती है । भारत के कुल अरंडी उत्पादन का 80 प्रतिशत उत्पादन केवल गुजरात में होता है । आन्द्र प्रदेश का स्थान दुसरे नबंर पर आता है ।

जलवायु :

इसकी खेती सभी प्रकार की जलवायु में की जा सकती है । अरंडी मुख्यतया सूखे और गर्म क्षेत्रों में, जहॉ वर्षा 400 से 750 से.मी. तक होती है । वहॉ इसकी खेती आसानी से होती है । यह लंबे सुखे को सहन कर सकती है अधिक वर्षा होने से इसमें अधिक बढ़वार हो जाती है । जिससे कीट व रोगों का अधिक प्रकोप हो जाता है और उत्पादन में गिरावट आ जाती है ।

मिट्टी :

अरंडी की खेती सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है । अच्छे जल निकास वाली बलुही दौमट मृदा इसके लिए सबसे ज्यादा उपयुक्त है । भराव वाले क्षेत्र एवं क्षारीय भूमि अरंडी की खेती के लिए उपयुक्त नहीं है ।

किस्में और संकर :

सामान्यत: असिचिंत क्षेत्रों में किसान पारपंरिक कम उपज वाली किस्में उगाते है । लेकिन विभिन्न अनुसंधानों से अब यह बात सिद्ध हो चुकी है कि संकर पारंपरिक किस्मों से ज्यादा उत्पादन देते है ।

सारणी-1

राज्य	किस्में/संकर
समस्त भारत	किस्में - DCS-107. 48-1 (ज्वाला), ज्योति संकर - DCH-177, DCH-519, GCH-4
आन्द्र प्रदेश	किस्में - क्रान्ती, किरण, हरीता संकर - DCH-32, PCH-111, PCH-222
गुजरात	किस्में - VI-9, GAUC-1, GC-2, GC-3 संकर - GAICJ-1 GCH-2, GCH-5, GCH-6, GCH-7
राजस्थान	संकर - RHC-1
तमिलनाडु	किस्में - SA-2, TMV-5, TMV-6 Co-1, 48-1 संकर - TMVCH-1, YRCH-1

खेत की तैयारी :

दो या तीन बार हल चलाऐ जिससे मानसून की वर्षा के साथ उगे खरपतवार नष्ट हो जाते है । अंतिम जुताई के पहले 5 टन गोबर की खाद मिला दे व पाटा देकर बुवाई हेतु लाइनें निकाल दे ।

बुवाई का समय :

मानसून की वर्षा के बाद अरंडी की बुवाई 15 जुलाई से शुरू करें और अगस्त के प्रथम सप्ताह तक पूरी कर दें । रबी के मौसम में अरंडी उगाने के लिए सितम्बर-अक्टुबर में करनी चाहिए ।

बुवाई की विधि :

असिचिंत क्षेत्रों में पौधों के बीच की दुरी 90 x 60 सें.मी. होनी चाहिए । पघेती बुआई के समय यह दुरी 60 x 30 सें.मी. होनी चाहिए । सिचित क्षेत्रों में पौधों के बीच की दुरी 120 x 60 सें.मी. होनी चाहिए ।

बीजदर :

सिंचित क्षेत्रों में 6-8 कि.ग्रा. / है. तथा असिंचित क्षेत्रों में 10-15 कि. ग्रा./है. की आवश्यकता होती है ।

बीज उपचार :

बुआई से पहले बीज को 24-48 घंटे भिगोने से कम नमी वाले क्षेत्रों में बीज उगने में आसानी रहती है । कार्बेन्डेजिम 2 ग्राम/है. में उपचारित करने के बाद एजोस्पाइरिलियम जीवाणु कल्चर से बीजोपचार (100 ग्राम/किलोग्राम) कर बुआई करें । अरंड के बीज को थिरम @ 3 ग्राम/कि.ग्रा.से बीजोपचार करने से अल्टनेरिया व विल्ट जैसी बिमारीयों से रक्षा होती है ।

खाद और उर्वरक :

असिचिंत क्षेत्रों में 40 किलोग्राम नत्रजन और 20 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर देवे जिसमें से 20 किलोग्राम नत्रजन व 20 किलोग्राम फास्फोरस बुआई के साथ तथा शेष 20 किलोग्राम नत्रजन खड़ी फसल में 30 दिन की अवस्था पर दे । सिचित नेत्रों में 60 के.जी. N व 60 के.जी फोस्फोरस प्रति हैक्टेयर देवे जिससे 20 के.जि. N प्रत्येक तुड़ाई के बाद देवे, दो टन/है. गोबर की खाद देने से अरंड उत्पादन में बढ़ोत्तरी पायी गई है ।

खरपतवार नियत्रण और निराई - गुड़ाई :

अरंडी की फसल खरपतवारों के प्रति अति सवेदनशील होती है । 45-50 दिन का समय खरपतवार नियंत्रण का सही समय होता है, जब तक पौधा 60 से.मी. का न हो जाऐ और पौधे अपने बीच की दूरी को ढ़क न लें तब तक समय-समय पर निराई गुड़ाई करते रहना चाहिए । 1.0 कि.ग्रा. पेंडीमिथलिन/है. को 600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से खरपतवार के प्रकोप से बचा जा सकता है ।

इंटर क्रोपिंग :

अरंडी की फसल में इन्टरक्रोप के रूप में मुख्यतय ज्वार, बाजरा, मूंग, मोठ, मुँगफली आदि को लगाया जाता है । इन्टरक्रोप के लिए दोनों फसलों की बुवाई एक साथ करें ।

सिंचाई :

अधिक और बार-बार सिंचाई ना करे जहाॅ पानी की कमी हो वहाॅ पहली सिंचाई प्रथम सिकरों के निकलने व द्वितिय सिकरों के निकलने के शुरूआत में करनी चाहिए । कम पानी वाले स्थानों पर 75, 95, 100 दिनों पर तीन सिंचाई देने से फसल पैदावार में वृद्धि देखी गई है । जहाॅ पानी की कमी ना हो वहाॅ 15-20 दिन के अंतर पर 8-10 सिंचाईयों फायदेमंध है ।

अरंडी में ड्रिप सिंचाई बहुत लाभदायक है । इससे पानी की बचत (35-40 प्रतिशत) व उपज में सार्थक वृद्धि होती है ।

अरंडी में रोग प्रबन्धन :

बोटराईटिस, अखटा व जड़ बिगलन अरंडी के प्रमुख रोग है । बोटराईटिस की रोकथाम के लिए बिना कांटेवाली किस्मों को उगाऐ तथा कार्बेन्डिजम (0.05 प्रतिशत) या थायोफानेट मिथाईल (0.05 प्रतिशत) का छिड़काव करें । अखटा के लिए ट्राईकोइर्मा विरिडि 10 ग्राम पाउडर प्रति किलोग्राम बीज से बोजोपचार तथा ट्राईकोडर्मा विरिडि पाउडर 2.5 कि.ग्रा/है. को गोबर की खाद के साथ मिलाकर बुवाई पूर्व भूमि में देना चाहिए । फसल चक्र अपनाऐ एवं भराव वाले क्षेत्रों में अरंडी न बोऐ । जड विगलन रोग के प्रकोप से जड़ गल जाती है और काली पडकर सूख जाती है । तथा पोधा मुरझा जाता है । इससे चाव के लिए कार्बेडाजिम 2 ग्राम दवा प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार कर बुवाई करें ।

इनके अलावा पत्ती धब्बा व झुलता रोग भी पाया जाता है । इनकी रोकथाम हेतु 2 ग्राम मेन्कोजेब पाउडर को प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें ।

अरंडी में कीट प्रबन्धन :

सेमीलूपर :

खराब पत्तियों पर अण्ड़ों व लारवा को इक्ट्ठा कर नष्ट करें तथा मोनो क्रोटोफोस (0.05 प्रतिशत) व क्युनालफोस 1 लीटर को 600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें ।

सफेद मक्खी :

मोनोक्रोटोफोस (0.05 प्रतिशत) या डाईमेथोऐट (0.05 प्रतिशत) का 15 दिन के अन्तराल पर दो छ़िड़काव करें ।

हरा तेला एवं लीफ माइनर :

इनसे बचाव के लिए डाइमिथोएट 30 ई.सी. या मोनोक्रोटोफोस 30 एस.एल एक लीटर दवा को 600 लीटर पानी में धोलकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें ।

संपूट भेदक :

इसमें बचाव के लिए मोनोक्रोटोफोस (0.05 प्रतिशत)या क्युनालफोस (1.5 प्रतिशत) का छिड़काव करें ।

लाल मकड़ी :

इसके नियत्रण के लिए इथियोन 50 ईसी या डाइकोफाल 18.5 ईसी एक मिली दवा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें ।

कटाई एवं गहाई :

औसतन 4-5 बार सिकरों की विभिन्न अवस्थाओं में तुड़ाई होती है । जब सिकरों का रंग हरे से पीला हो जाऐ तथा उनके 2-3 संपूट पूरी तरह सुख जाऐ तब कटाई कर लें । सिकरों के पूरी तरह सुखने का इंतजार नहीं करना चाहिए । अन्यथा बीज चटक कर बिखर जाऐगें । पहली तुड़ाई करीब 90-120 दिन के तथा बाद में प्रत्येक 30 दिन के अन्तराल पर तुड़ाई करें । तोड़ने के बाद सिकरों को धुप में सुखाना चाहिए । सिकरों को कुट कर या थ्रेसर में डालकर बीज निकालना चाहिए ।

उपज :

औसतन सुखे क्षेत्रों में 800-1000 कि.ग्रा./है. तथा उपयुक्त सिंचाई वाले क्षेत्रों में 1500-2500 कि.ग्र./है. उपज होती है । हालाकिं गुजरात में 5000-6000 कि.ग्रा./है. तक की उपज देखी गई है ।

अरंडी की अच्छी फसल

अरंडी + मुँगफली इंटर क्रोपिंग

अलसी की कम लागत की तकनीक

एच.पी.मीणा एवं प्रधुम्न यादव

अलसी रबी की एक महत्पूर्ण तिलहनी फसल है । क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का अलसी उत्पादन में प्रथम स्थान है । उसका तेल औधोगिक उत्पादों व खाद्य तेल के रूप में इस्तेमाल होता है । इसके बीज में तेल की मात्रा 35-45 प्रतिशत तक होती है । इसके तेल में ओमेगा-3 वसीय अम्ल की प्रचुरूता होती है ।

भारत, कनाड़ा, चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, ऊकरेन, यूनाइटेड किंगडम और रुस अलसी उगाने वाले मुख्य देश है ।

खेती के क्षेत्र :

प्रमुख रूप से अलसी को मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश व बिहार राज्य में उगाया जाता है ।

जलवायु :

अलसी कम वर्षा व ठंडे स्थानों के लिए उपयुक्त फसल है । बुआई के समय ठण्डा मौसम चाहिए ।

मृदा :

अच्छा पानी सोखने की क्षमता वाली भारी मिट्टी अलसी की खेती के लिए उपयुक्त होती है । यह फसल 5-7 पी.एच.मान वाली मिट्टी मैं आसानी से उगाई जा सकती है ।

किस्में / प्रजातियॉ :

अलसी की बहुत सारी प्रजातियॉ अलग-अलग राज्यों के लिए संस्तुत की गई है । जबकि सभी राज्यों के लिए शीला, श्वेता, शेखर एल.एम.एस.-4-47, आर.एल.सी.-81 सुझायी गई है । अलग-अलग राज्यों के लिए संस्तुत प्रजातियॉ सारणी-1 में दी गई है ।

बीज दर :

बीज दर किस्म के प्रकार पर निर्भर करती है । ऐसी प्रजातियॉ जिनका बीज मोटा होता है का 40 किलोग्राम/हैक्टर व छोटे आकार वाली प्रजातियों का 20 किलोग्राम / हैक्टर सुझाया गया है ।

बीजोपचार :

अच्छी फसल लेने के लिए बीजो का बुआई से पहले एग्रोसन जी.एन. या थाईरम कि 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें ।

बुआई का समय :

बुआई का समय हर क्षेत्र के लिए अलग-अलग है । प्रायदवीपीय क्षेत्र में सितम्बर - अक्टूबर,गंगा क्षेत्र में नवम्बर, हिमाचल प्रदेश में अक्टूबर व कश्मीर क्षेत्र में फरवरी-मार्च में बुआई करनी चाहिए ।

खाद एवं उर्वरक :

पोषक तत्व और नमी की कमी अलसी की कम पैदावार के मुख्य कारण है । अत: भूमि की आखरी तैयारी के समय 5 से 8 टन गोबर की खाद प्रति हैक्टर की दर से मिलायें । अलसी के लिए सामान्यत: 40-60 किलोग्राम नाईट्रोजन, 20-30 किलोग्राम फॉस्फोरस व 30 किलोग्राम सल्फर को 5 टन/हैक्टर की दर से सिफारिश की गयी है । शुष्क क्षेत्रों में सभी उर्वरको को बुआई के समय ड़ाल दें । जबकि सिचित क्षेत्रों में नाइट्रोजन को दो बार देना चाहिए पहला बुआई के समय एवं दूसरी खुराक बुआई के 25-30 दिन के बाद जब पहली सिंचाई दें उस समय ड़ाले । अलग-अलग राज्यों के लिए उर्वरको की संस्तुत मात्रा सारणी-2 में दी गई है ।

खरपतवार नियंत्रण :

खरपतवार फसल को भारी नुकसान पहुँचाते है । यह नुकसान 40 प्रतिशत तब ऑका गया है । अत: फसल को खरपतवार रहित रखें । बुआई के बाद शुरू के 20 से 40 दिन बहुत महत्वपूर्ण होते है । बुआई के 15-20 दिन बाद एक बार हाथ से खरपतवारो को निकालना चाहिए । जबकि सिंचित क्षेत्रों में दो बार खरपतावार निकालना जरुरी होता है । पहला बुआई के 20 दिन बाद एवं दुसरी 30-35 दिन बाद खरपतवार निकालें । अगर हाथ से खरपतवार निकालना सम्भव ना हो तो बुआई के 30 दिन बाद फ्लूक्लोरेलिन की 1 कि.ग्रा./है. एलाकलोर या मेथाबेन्जाथीयोजूरान 1 कि.ग्रा./है. और डाइक्लोफोप-मिथाईल की 0.7 कि.ग्रा. / हैक्टर की दर से उपयोग करना काफी लाभकारी सिद्ध होता है ।

सिंचाई :

अलसी कम सिंचाई वाली फसल है । लेकिन अगर अंकुरण व पुष्पन के समय सिंचाई देते है तो अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है । अगर बुआई के 35 और 75 दिन बाद एक या दो सिंचाई देने में फसल की पैदावार दोगुनी हो जाती है । वही हल्की मृदा में, 3-4 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है ।

कीट प्रबंध :

1) **अलसी की कली मक्खी** : यह बहुत ही खतरनाक कीट है जो फसल को नुकसान पहुँचाता है । अत: इसकी रोकथाम के लिए फसल चक्र अपनाये, जल्दी बुआई करें । और कीट का प्रकोप दिखने पर इमीडाक्लोपरीड (0.2 मिली/लीटर) था ऑक्सीडीमीटोन मिथाइल (600 मि.ली./हैक्टर) का छिड़काव करें । अगर जरूरत पड़े तो दुसरा छिड़काव 15 दिनो के अन्तराल पर कर सकते है ।

2) **सेमीलूपर** : इसकी रोकथाम के लिए फसल पर सिस्टेमिक कीटनाशीयों का छिड़काव करें । जरूरत पड़ने पर 15 दिन के बाद फिर छिड़काव करें।
3) **अन्य मुख्य कीट** : सभी मुख्य कीटों की रोकथाम के लिए 10-15 दिन पहले बुआई करे जिससे फसल कली मक्खी (बड फलाई) से बच जाती है । या फिर कीट प्रतियोगी प्रजातियों का चयन करें जैसे नीला, मुक्ता, गरीमा, शुबरा, लक्ष्मी-27, किरण और हिमालीनी ।

रोग प्रबंध :

1) **रतुआ रोग (रस्ट/जंग)** : यह अलसी की सबसे गम्भीर बीमारियों में से एक है । इसके नियंत्रण के लिए रोगी पौधो को उखाड़ दें व डाइथेन जेड-78 की 2 किलोग्राम मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें । ऑक्सीकार बोक्सीन से बीजोपचार करना चाहिए । खेत में पड़े हुए पौध अवशेषों को या खरपतवारों को निकाल देना चाहिए । इसके अलावा रतुआ रोग प्रतिरोधी प्रजातियों जैसे नीलम, शुबरा, श्वेता, किरण, हिमालीनी, जे.एल.एस.-1, या जवाहर-23 को लगावें । इनके अलावा जब फसल में रोग दिखाई देने लगे तब 15 दिनों के अंतराल पर दो बार सल्फेक्स (0.05 प्रतिशत) या केलिक्सितन (0.05 प्रतिशत) या केलिक्सिन + डाइथेन एम-45 का छिड़काव करें ।
2) **पत्ती की धब्बेदार बिमारी (अल्टनेरिया लीनी)** : यह पौधे की पत्तियों पर दिखाई देती है बाद में तने पर भी फैल जाती है । इसमें शुरू में पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बे बनते है जो बाद में काले रंग के हो जाते है तथा बाद में पत्तियों सुखकर गिर जाती है । इस रोग की रोकथाम के लिए बीज को बुआई से पूर्व थाईरम 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज या टोपसीन एम की 2 ग्राम/कि.ग्रा बीज की दर से बीजोपचार करें। 15 दिन के अंतराल पर रोबराल (0.2 प्रतिशत) या डाईथेन एम-45 (0.25 प्रतिशत) का छिड़काव करें । रोग प्रतिरोधी प्रजातियॉ जैसे किरण एवं सुबरा को ही लगावें।
3) **उकट्ठा रोग** : इस रोग में पौधे ऊपर से पहले मुरझाना शुरू होता है बाद में पुरा पौधा सुख जाता है । इस रोग की रोकथाम के लिए 2-3 वर्ष तक अलसी की फसल नहीं लगावें । गर्मी में गहरी जुताई करें । रोगी पौधों को तुरंत खेत से निकाल कर जाला दें । बीज को थाईरम या टोपसीन 2.5 ग्राम / कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें । उकठा रोग प्रतिरोधी प्रजातियों जैसे आर.-552, किरण, एल.सी.-185, एल.सी.-54, जे.एल.एस.-1, हिमालीनी एवं गरीमा को लगावें ।
4) **चूर्णित आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू)** : इस रोग की रोकथाम के लिए फसल की बुआई थोडी जल्दी करनी चाहिए । रोग दिखाई देने पर वेटेबल सल्फर (0.3 प्रतिशत) या केरावेन (0.2 प्रतिशत) का 15 दिन के बाद छिड़काव करे अगर जरूरत पड़े तो फिर छिड़काव करें । इसके अलावा रोग रोधी प्रजातियॉ जैसे किरण,जवाहर-23, गरीमा, श्वेता, जे.एल.एस. (जे.)-1, एल.सी.-54 और हिमालीनी को ही लगावें ।

केटाई :

अलसी की फसल 130-150 दिन में पक जाती है । पकाई के समय संपूट व तना पीला हो जाता है । गहाई के लिए थ्रेशर का प्रयोग कर सकते है । गहाई के बाद बीजो को कम नमी वाले स्थान पर भण्डारण करना चाहिए ।

सारणी- 1 : अलग-अलग राज्यों के लिए अलसी की संस्तुत प्रजातियॉ/किस्में

राज्य	शुष्क क्षेत्र के लिए प्रजातियॉ	सिंचित क्षेत्र के लिए प्रजातियॉ
उत्तर प्रदेश	लक्ष्मी -27, किरण, स्वेता, शेखर	सुबरा, लक्ष्मी-27, टी.-397, नीलम, गरीमा, गौरव, सीखा, रश्मी, मीरा, पावर्ती, एन.एल.-142
मध्य प्रदेश	सारदा, इन्दिरा अलसी-1 (आर.एल.सी.-81), आर.-552, पदम्नी, किरण	जवाहर-23, जे.एल.एस.-9, टी.397, एस.एल.एस.-27, एन.एल.-142
राजस्थान	किरण, पद्मिनी, शारदा (एल.एम.एस.4-21)	जवाहर-23, टी.397, हिमालीनी, प्रतात अलसी-1, रश्मी, मीरा, आर.एल.-914, एस.एल.एस.-27, एन.एल.-142
बिहार	श्वेता, शेखर	टी-397, गरीमा, सुबरा, गौरव, सीखा, रश्मी, मीरा, पारवती
पाश्चिम बंगाल	श्वेता, शेखर	गरीमा, सुबरा, गौरव, नगरकोट, रश्मी, मीरा, पारवती
छतीसगढ़	इन्दिरा अलसी-32 (आर;एल.वी.81), कार्तिका (आर.एल.सी.76) शारदा (एल.एम.एस.-4-27)	दीपीका (आर.एल.सी.-78)
उड़ीसा	किरण, पद्मिनी, एल.एम.एस.4-47, इन्दिरा अलसी-1, शारदा	एस.एल.एस.27
महाराष्ट्र	किरण, माधवी, एन.एल.97, एल.एम.एस.-4-47, इन्दिरा अलसी-1	जवाहर-23, एस.एल.एस.-27
कर्नाटक	इन्दिरा अलसी-1, किरण, शारदा	ज्वाहर-23, एस.एल.एस.27
आन्ध्र प्रदेश	एल.एम.एस.-4-47, आर.एल.सी.-81, शारदा	एल.एम.एस.-4-47

पंजाब	शीला	हिमालीनी, जीवन, नगरकोट, विनवा (के.एल.-210), एल.सी.-54, एल.सी.-2063
हरियाणा	शीला	हिमालीनी, बिनवा (के.एल.-210)
हिमाचल प्रदेश	शीला	हिमालीनी, जीवन, नागरकोट, के.एल.-210, एल.सी.-54
जम्मु एवं कश्मीर	शीला	विनवा (के.एल.-210)
असम	श्वेता, शेखर	टी.-397, गरीमा, सुबरा, गौरव, नगरकोट, शीखा, रश्मी, मीरा, पारवती

सारणी-2 : अलग-अलग राज्यों के लिए उर्वरकों की संस्तुत मात्रा

राज्य	सिचित क्षेत्र के लिए		शुष्क क्षेत्र के लिए
	बीज के लिए	बद्धि उद्देश्य (बीज एवं रेशे)	
मध्य प्रदेश	90:30:30	-	30:15:15
उत्तर प्रदेश	90:30:30	120:40:40	40:20:20
पश्चिम बंगाल	90:30:30	90:40:40	40:20:20
राजस्थान	60:30:30	-	40:20:20
उड़ीसा	90:30:30	--	30:15:15
महाराष्ट्र	60:30:30	--	40:20:20
कर्नाटक	60:30:30	--	30:15:15
छत्तीसगढ़	90:30:30	--	40:20:20
पंजाब	65:30:30	120:40:40	40:20:20
हिमाचल प्रदेश	65:20:20	90:40:40	40:20:20
हरियाणा	90:30:30	120:40:40	-
बिहार	90:30:30	120:40:40	40:20:20
असम	90:30:30	120:40:40	40:20:20

अलसी

मूँगफली- उत्पादन बढ़ाने के उपाय

मूँगफली अनुसंधान निदेशालय

परिचय :

भारत में मूँगफली एक महत्वपूर्ण तिलहनी फसल है । वर्ष 2010-11 में भारतवर्ष में मूँगफली का क्षेत्रफल एवं उत्पादन क्रमश: 58.6 लाख हेक्टेयार तथा 82.6 लाख टन था, जबकि उत्पादकता मात्र 1411 किग्रा/हैक्टेयर थी । मूँगफली उत्पादक राज्यों में गुजरात, तमिलनाडू, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक और राजस्थान का मुख्य स्थान है । मूँगफली का वानस्पतिक नाम *एरेकिस हायपोजिया (Arachis hypogaea)* है जो ग्रीक शब्द ऐरेकिस से तात्पर्य फली और हायपोजिया से तात्पर्य जामीन के नीचे,से लिया गया हे । मूँगफली सभी वर्गों के लोगों द्वारा पसंद की जाती है तथा संतुलितआहार प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है । मूँगफली का भूसा पालतू जानवरों के लिए स्वादिष्ट एवं पोषक तत्वा से भरपूर चारे का स्रोत है । मूँगफली की खली जानवरों को खिलाने और जैविक खाद के रूप में काम में ली जाती है । वर्तमान में मूँगफली से विभिन्न प्रकार के परिष्कृत खाद्य पदार्थ बनाये जोने लगे हैं जिनकी बाजार में बहुत मॉग है । मूँगॅफली का छिल्का जलाने के काम में या जैविकखाद बनाने के काम में भी लिया जाता है ।

मूँगुलीके दानों (गिरी) में पोषक तत्वों की मात्रा (प्रति 100 ग्रा)

कार्बोहाइड्रेट (ग्रा)	26.1	कैल्सियम (मिग्रा)	90
प्रोटीन (ग्रा)	25.3	नाईसिन (मिग्रा)	19.9
वसा (ग्रा)	40.1	लोहा (मिग्रा)	2.5
खनिज तत्व (ग्रा)	2.4	थाईमिन (मिग्रा)	0.90
नमी (ग्रा)	3.0	राइबोफ्लेविन (मिग्रा)	0.13
रेशा (ग्रा)	3.1	केरोटिन (माइक्रोग्रा)	37
फॅस्फोरस (मिग्रा)	350	उर्जा (कि.के.)	567

मृदा एवं खेत की तैयारी :

यद्यपि मूँगफली की फसल विभिन्न प्रकार की मृदाओं में ली जा सकती है परन्तु, भरपूर पैदावार के लिए उचित जल निकास वाली तथा उच्च कैल्सियम एवं मध्यम कार्बनिक पदार्थ युक्त दोमट और बलुई दोमट मिट्टी, जिसका पी.एच. मान 5.5 से 7.0 के मध्य हो, उपयुक्त रहती है । अम्लीय (पी. एच.मान <5.5), क्षारीय (पी. एच. मान >7.8 से अधिक)एवं लवणीय मृदायें (विद्युत परिचालकता >4 डेसी साइमन्स प्रति मीटर), मूँगफली उत्पादन के किलए उपयुक्त नहीं होती है ।

मूँगफली की फसल के लिए खेत की तैयारी मृदा के प्रकार, मृदा नमी एवं मानसून पर निर्भर करती है । सामान्यत: मूँगफली की फसल के लिए खेत की तैयारी हेतु एक बार मिट्टी

पलटने वाले हल से जुताई करनेके बाद, दो बार हैरो या कल्टीवेटर चलायें, जिससे मिट्ठी भुरभुरी हो जाए तथा उसके बाद पाटा लगाकर खंत को समतलहरें । गर्मियों में गहरी जुताई करने से मृदा के अंदर उपस्थित खरपतवारों के बीज, कीट एवं रोग जनित जीवाणुअधिक तापमान के कारण नष्ट हो जाते हैं। भारी वर्षा वाले क्षेत्रों एवं जलमग्नता की समस्या वाली भूमि में 10-15 सेमी ऊँची उठी क्यारियॉ बनाकर फसल को जलमग्नता की समस्या से बचाया जा सकता है ।

बीज एवं बीजोपचार :

बीज के लिए चयनित फलियॉ में से बुवाई के लगभग एक सप्ताह पहले हाथ का मशीन से बीज निकाल दे । पुराने बीज बुवाई हेतु उपयोग में न लें क्योंकि उनमें अंकुरण क्षमता कम हो जाती है जिससे पर्याप्त पौध संख्या नहीं मिल पाती है । टूटे हुये, अपरिपक्व और संक्रमित बीज बुवाई हेतु काम में न लें । बलीज का अंकुरण परीक्षण अवश्य करवाना चाहिए । बीज जनित बीमारियों के नियंत्रण के लिए बीजों को मेंकोजेब या कार्बेन्डजिम ग्राम/किग्रा बीज की दर से उपचारितकरें । बीजों को 10 ग्राम/किग्रा बीज या मृदा को 10 किग्रा/हेक्टेयर की दर से *ट्राईकोडरमा विरिडी* से उपचारित करना चाहिए । प्रारम्भिक अवस्था में बीजों को कीटों के नुकवारन से बचाने के लिए क्लोरोपाईरीफॉस 20 ई.सी (कीट प्रकोप की तीव्रता के अनुसार 12.5-25 मिली/किग्रा बीज) से उपचारितकरें । इसके पश्चात बीजों को *राईजोबियम कल्चर* और फॉस्फेट घोलक जीवाणु कल्चार (प्रत्येक की 600 ग्राम/हैक्टेयर मात्रा) से उपचारित करें । बीजोपचार के क्रम में सबसे पहले कवकनाशी,फिर कीटनाशी, उसकेबार *राईजोबियम* तथा अंत में *फॉस्फेट* घोलकजीवाणु से उपचाहिरत करना चाहिएयें । उपचार के बाद बीजों को छायादार स्थान पर सुखाना चाहिए । मूँगफली में फैलने एवं अर्थफैलने वाली किस्मों में पकनेके बाद 60-70 दिनों तक सुपुप्तावस्था रहती है । अत: बीजों की सुषुप्तावस्था को तोड़ने के लिए 250 पी.पी.एम ईथ्रिल विलयन में 6-8 घंटे तक डुबोकर रखें । झुमका वाली किस्मों का बीज बुवाई हेतु फसल कटाई के तुरंत बाद उपयोग में ले सकते हैं ।

बुवाई का समय और बुवाई :

भारत में मूँगफली की बुवाई मुख्यत: खरीफ, रबी तथा ग्रीष्म ऋतुओं में की जाती है । खरीफ में मुख्य रूप से गुजरात, आंध्रप्रदेश, तमिलनाड़ू, कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में जून से सिम्बर के मध्य उगाई जाती है ।

रबी में मुख्यतया: देश के मध्य, पूर्वी एवं दक्षिणी भागों में नवम्बर से अप्रेल के बीच में उगाई जाती है । यह सामान्यतया धान के खाली खेतों में शेष नमी के उपयोग हेतु और साथ में सिंचाई की उपलब्धता की दखा में ओडीशा, असम और पश्चिम बंगलामें उगाई जाती है । मूँगफलीकी सिंचित गीष्मकालीन फसल मुख्यत: गंजरात, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडू और राजस्थान के कुछ भागों में जनवरी से मई-जून के मध्य उगाई जाती है ।

मूँगफली की फसल सामान्रूत: समतल क्यारियों में बोई जाती है परन्तु अच्छी फसल के लिए निम्न उन्नत विधियों से फसल गउाना लाभप्रद होता है ।

आड़ी-मिरछी बुवाई :

इस विधि से बीज का समान वितरण होता है तथा प्रति इकाई, क्षेत्रफल में पौधों की संख्या अधिक रहती है । जिसके कारण परम्परागत बुवाई की तुलना में उपज में 18 प्रतिशत तक वृद्धि होती है । इस विधि में बीज की मात्रा परम्परागत विधि के बराबर ही रखतें हैं 1 बीज की मात्रा को दो बराबर भागों में बांटा जाता है । प्रथम आधे भाग की बुवाई सीधी कतारों में 30 सेमी दूरी पर तथा शेष आधे बीज की बवाई अधोलंब दिशा में समान दूरी पर करते हैं ।

चौड़ी-क्यारी और नाली विधि :

यह विधि उच्च वर्षा वाले क्षेत्रों में काली मिट्टी में बुवाई के लिये उपयोगी हरती है । इस विधि में 1-1.2 मीटर चौड़ी और 15 सेमी ऊँची उठी हुई क्वारियॉ बनाई जाती है जिनके दोनों तरफ 30-50 सेमी चौडाई की नलियों बनाते हैं । प्रत्येक चौड़ी क्यारी पर चार या पॉच कतारे समान दूरी पर काई जाती है । इस विधि से वर्षा जलके संरक्षण, भूमि के कटाव को रोकने तथा अतिरिक्त वर्षा जल के खेत से निकास में मदद मिलती है ।

मेड एवं नाली विधि :

मूँगफली की बुवाई के लिए समतल क्यारियों पर सीड ड्रिल का उपयोग करते हैं लेकिन मेड एवं नाली विधि में बुवाई हाथ से मेड के दोनों तरफ करते हैं ताकि पौधा पानी के सीधे संपर्क में न आये । नाली जल संग्रहण द्वारा नमी को बढ़ाने के साथ अधिक वर्षा जल के निकास के लिए भी उपयोगी होती है ।

इनके अलावा, मूँगफली को ऊँची उठी क्यारी एवं नाली विधि से भी उगाया जाता है जिसमें 60 सेमी चौड़ी व 10-15 सेमी ऊँचीउठी क्वारियॉ जिनके दोनों तरफ 30 सेमी चौडाई की नालियॉ बनाते हैं, पर तीन कतारे 20 सेमी दूरी पर बोई जाती हैं ।

बीज दर एवं फसल ज्यामिति :

भारत में अपर्याप्त पौध संख्या मूँगफली की कम उत्पादकता का ए मुख्य कारण है । पौधों की उपयुक्त संख्या मुख्यत: मूँगॅफली की किस्म, मृदा नमी और प्रबंधनपर निर्भर करती है । बीज की मात्रा किस्म, बीज के आकार, वजन तथा कतार से कतार की दूरी पर निर्भर करती है । झुमका किस्मों के लिए सामानयत: 100-110 किग्रा बीज/हेक्टेयर जबकि फैलने एवं अर्द्ध-फैलने वाली किस्मों के लिए 95-100 किग्रा बीज/हेक्टेयर पर्याप्त होता है । झुमका किस्मों में कतार से कतार की दूरी 30 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी रखते हैं जिससे प्रति हेक्टेयर 3.33 लाख पौधे प्राप्त होते हैं । फैलने वाली मूँगफली की किस्मों के लिए कतार से कतार की दूरी 45 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी या कतार से

कतार की दूरी 30 सेमी और पौधे से पौधे की दूरी 15 सेमी रखते हैं जिससे प्रति हेक्टेयर2.2 लाख पौधे प्राप्त हो सके ।

उन्नत किस्में :

तालिका - 1 : विभिन्न राज्यों के लिए अनुसंशित मूँगफली की उन्नत किस्में

राज्य	किस्में
आंध्र प्रदेश	कादरी-5, कादरी-6, कादरी-7, कादरी-8, कादरी-9, कालाहस्ती, नारायणी,प्रसुना, अभया, ग्रीष्मा, विजेथा, आई.सी.जी.वी.00350
गुजरात	जी.जी.-6, जी.जी.-7, जी.जी.-16, जी.जी.-20, टी.जी.-26, जी.जे.जी., एच.पी.एस.-1, प्रूथा, जे.एल.-501, टी.जी.-37ए
महाराष्ट्र	टी.के.जी.-19, ए, टी.ए.जी.-24, टी.एल.जी.-15, फुले उनाप, रतनेश्वर, ए.के.-265, ए.के.-303
तमिलनाडू	टी.एम.वी.-13, वी.आर.आई-6, वी.आर.आई.-7, ए.के.-265, अजेया, आई.सी.जी.वी.-00348, आई.सी.जी.वी.-00350, विजेथा, जी.जी.-16
कर्नाटक	वी.आर.आई.-6, वी.आर.आई.-7, ए.के.-265, अजेया, आई.सी.जी.वी.-00348, आई.सी.जी.वी.91114, जी.जी.-16, टी.जी.एल.पी.एस.-3, विकास, कादिरी हरितन्धरा
राजस्थान	एच.एन.जी.-10, एच.एन.जी.-69, एच.एन.्जी.-123, टी.वी.जी.-39, जी.जी.-20, टी.जी.-37, एद्व टी.ए.जी.-24, गिरनार-2, पी.एम.-1, पी.सम.2, प्रतापराज मूँगफली, दुर्गा, उत्कर्ष
पंजाब	एस.जी.-99, एम-548, टी.जी.-37, ए.जी.जी.-21, गिरनार-2, एच.एन.जी-10, एच.एन.जी-69
मध्य प्रदेश	जे.जी.एन.-3, जे.जी.एन.-23, ए.के.-159, जी.जी.-8
ओडीशा	स्तुति, आए.सी.जी.वी.-91114, टी.जी.-51, विजेथा, गिरनार-3, टी.जी.∗37, ए.ओ.जी-38, बी.वसुंधरा देवी
पश्चिम बंगाल	टी.जी.-51, विजेथा, गिरनार-3, टी.जी.-38, बी. वसुन्धरा, टी.जी.-37उ
उत्तर प्रदेश	टी.जी.-37, जी.जी.-21, गिरनार-2, एच.एन.जी.-10, एच.एन.जी.-69, उत्कर्ष
उत्तर-पूर्वी क्षेत्र	टी.जी.-51, विजेथा, गिरनार-3, टी.जीइ.-38, बी.वसुन्धरा, जी.पी.बी.डी-5,
झारखंड	गिरनार-3

खाद एवं उर्वरक :

खाद एवं उर्वरकों की मात्रा मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों तथा फसल की दखा (सिंचित/बारानी) पर निर्भर करती है । सामान्यता मूँगफली की फसल मृदा से औसतन 63 किग्रा नत्रजन, 11 किग्रा फॉस्फोरस, 46 किग्रापोटाश, 27 किग्रा कैल्सियम तथा 14 किग्रा मैग्नेशियम प्रति टन फली तथा प्रति दो टन भूसा उत्पादन के लिये उद्ग्रहण करती है ।

चूँकि यह एक दलहनी फसल है जो जड़-ग्रंथीय जीवाणुओं द्वारा वातावरण की नत्रजन को स्थिरीकृत करने की क्षमतारखती है, परन्तु अधिक उत्पदकता के लिए अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद 10 टन/हेक्टेयर की दर से बुवाई के तीन सप्ताह पहले तथा अनुसंशित जत्रज, फॉस्फोरस तथा पोटाश की मात्रा (तालिका 2-4) का उपयोगबुवाई के समय करना आवश्यक है । कैल्सियम एवं सल्फर की उपलब्धता फलियों के विकास तथा गुणवत्ता हेतु आवश्यक है 1 अत: कैल्सियम एवं सल्फर का प्रयोगकरना चाहिए । मैग्नेशियम की कमी को दूर करने के लिए 10 किग्रा/हेक्टेयर की दर सेमैग्नेशियम सल्फेट बुवाई के समय मृदा में डालना चाहिए । यदि मृदाकमें किसी पोषक तत्व की मात्रा न्यून श्रेणी में आती है तो उस पोषक तत्व की अनुसंशित मात्रा का 1.5 गुणा उर्वरक या खाद द्वारा दिया जाना चाहिए ।

तालिका-2 : विभिन्न राज्यों में मूँगफली हेतुनत्रजन, फॉस्फोरस तथा पोटाशा की अनुसंशित मात्रा

राज्य	बारानी/ सिंचित	जत्रजन (किग्रा/ हे.)	फॉस्फोरस	पेटाश (कि.ग्रा/हे.)
आंध्र प्रदशे	बारानी	20	40	20
	सिंचित	30	60	45
गुजरात	बारानी	12.5-25	25-60	0.30
	सिंचित	25-37.5	50-70	0-30
कर्नाटक	बारानी	15	30	25
	सिंचित	25	75	25
मध्य प्रदेश	बारानी	20	40	20
	सिंचित	15	40	25
पंजाब	सिंचित	15	40	25
राजस्थान	बारानी	20	60	0
	सिंचित	20	60	0
महाराष्ट्र	सिंचित	20	40	0
उत्तर प्रदेश	बारानी	15	30	45
पश्चिम बंगाल	सिंचित	15	30	45
तमिलनाडू	बारानी	11	22	33
	सिंचित	22	44	66

उपरोक्त नत्रजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश पोषक तत्वों की मात्रा को देने के लिए, निम्नलिखित तालिका 3 में दी गयी उर्वरकों की मात्रा का प्रयोग करना चाहिए :

तालिका-3 : विभिन्न राज्यों में मूँगफली हेतु विभिन्न उर्वरकों की अनुसंशित मात्रा

राज्य	बारानी/ सिंचित	यूरिया (किग्रा/	सिंगल सुपर	म्यूरेट ऑफ

		हे.)	फॉस्फेट (किग्रा/हे.)	पोटाश (कि.ग्रा/हे.)
आंध्र प्रदशे	बारानी	43.5	250	35
	सिंचित	65	375	78
गुजरात	बारानी	27-54	156-375	0-52
	सिंचित	54-82	312.5-437.5	0-52
कर्नाटक	बारानी	33	188	43
	सिंचित	54	469	43
मध्य प्रदेश	बारानी	43.5	250	35
पंजाब	सिंचित	33	250	43
राजस्थान	बारानी	43.5	375	0
	सिंचित	43.5	375	0
महाराष्ट्र	सिंचित	43.5	250	0
उत्तर प्रदेश	बारानी	33	188	78
पश्चिम बंगाल	सिंचित	33	188	78
तमिलनाडू	बारानी	24	138	57
	सिंचित	48	275	114

यदि सिंगल सुपर फॉस्फेट उपलब्ध नहीं हो तो, निम्नलिखित तालिका 4 में दी गयी उर्वरकों की मात्रा का उपयोग करना लाभप्रद रहता है ।

तालिका-4 : विभिन्न राज्यों में मूँगफली हेतु विभिन्न उर्वरकों की अनुसंशित मात्रा

राज्य	बारानी/ सिंचित	यूरिया (किग्रा/ हे.)	बीएपी (किग्रा/हे.)	म्यूरेट ऑफ पोटाश (कि.ग्रा/हे.)
आंध्र प्रदशे	बारानी	10	87	35
	सिंचित	14	130	78
गुजरात	बारानी	06	5-130	0-52
	सिंचित	12-22	110-150	0-52
कर्नाटक	बारानी	70	65	43
	सिंचित	--	163	43
मध्य प्रदेश	बारानी	10	87	35
पंजाब	सिंचित	--	787	43
राजस्थान	बारानी	-	130	0
	सिंचित	-	130	0

महाराष्ट्र	सिंचित	10	87	0
उत्तर प्रदेश	बारानी	07	65	78
पश्चिम बंगाल	सिंचित	07	65	78
तमिलनाडू	बारानी	05	48	57
	सिंचित	10	96	114

यदि मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी है या खड़ी फसल मे सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई दें तो निम्नलिखित तालिका-5 में दी गयी सूक्ष्म पोषक तत्वाधारी उर्वरकों की मात्रा का उपयोग करना चाहिये :

तालिका5 : विभिन्न सूक्ष्मपोष्कतत्वधारी उर्वरकों की प्रयोग दर

सूक्ष्म पोषक तत्व	उर्वरक एवं भूमि प्रयोग दर	पर्णीय छिडकाव दर
बोरोन	बोरेक्स 5-20 किग्रा/हेक्टेयर	2 ग्राम बोरेक्स/लीटर पानी
कॉपर	कॉपर सल्फेट 5-10 किग्रा/हेक्टेयर	1 ग्राम कॉपर सल्फेट + 0.5 बुझा हूआ चूना/लीटर पानी
मैंग्नीज	मैंगनीज सल्फेट 10-50 किग्रा/हेक्टेयर	6 ग्राम मैंग्नीज सल्फेट + 3 ग्राम बुझा हुआ चूना/लीटर पानी
जस्ता	जिंक सल्फेट 10-50 किग्रा/हेक्टेयर	5 ग्राम जिंक सल्फेट + 2ग्राम बुझा हुआ चूना/लीटर पानी
मोलिब्डेनम	सोडियम या अमोनियम मोलिब्डेट 0.5-1.0 कि.ग्रा/हेक्टेयर	0.1 ग्राम अमोनियम मोलिब्डेट / लीटर पानी
लोहा	फेरस सल्फेट 10 किग्रा/हेक्टेयर	5 ग्राम फेरस सल्फेट + 1 ग्राम साइट्रिक अम्ल/लीटर पानी

खरपतवारों के कारण मूँगफली की फसल में शुरुआत के 35 दिनों तक सबसे ज्यादा नुकसान होता है । मूँगफली की फसल में खरतपवारों से औसतन 45 प्रतिशत तक नुकसान ऑका गया है ।

प्रबंधन के उपाय :

कृषण विधि :

- उचित कतार से कतार की दूरी होने पर फसल अच्छी तरह से फैल जाती है जिससे खरपतवारों की वृद्धि कम होती है ।
- कतारों के बीच के स्थान को फसलों के अवशेषों (जैसे भूसा) से टक देना चाहियें जिससे खरपतवारों का अंकुरण नहीं हो पाता है ।
- फसल चक्र अपनाने से खरपतवार नियंत्रणमें मदद मिलती है ।
- अन्त: फंसल उगाना जिससेभूमि अच्छी तरह से ढकी रहती है तथा खरपतवारों को नियंत्रित करने में सहायता मिलती है ।

भौतिकएवं यंत्रिक विधि :

- हाथ तथा ब्लेड हैरो से खरपतवारों को निकालना ।
- मिनी ट्रेक्टर द्वारा आन्त:सस्य से कम समय में ज्यादा क्षेत्र में खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता है ।

रासायनिक विधि :

निम्नलिखित रासायनिक खरपतवारनाशियों द्वारा भी खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है :

खरपतवारनाशी	दर (किग्रा सक्रिय तत्व/हे)	छिड़काव का समय
पेडीमेथालिन	1.0-2.0	अंकुरण से पहले
ऑक्सीफलूरोफेन	0.25-0.50	अंकुरण से पहले
फ्यूजालोफ़ोप इथाइल	0.050	अंकुरण के 15-20 दिन बाद
इमेजोथाईपर	0.050	अंकुरण के 15-20 दिन बाद

खरपतवार नाशियें के अंधा-धुंध प्रयोग से बचना चाहिए तथा खरपतवारनाशी मिश्रण का प्रयोगकरें जिससे कि खरपतवारों में प्रतिरोधाक क्षमताविकसित न हो सके । आजकल मूँगफली में प्लास्टिक पलवार का प्रयोग दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है । इससे खरपतवार नियंत्रण में काफी मदद मिलती है तथा यह साथ ही साथ भूमि में सिंचित नमी के संरक्षण में भी सहायक है ।

सिंचाई प्रबंधन :

सिंचाई की आवृति मृदा के प्रकार एवं वाष्पोत्सर्जन मॉग पर निर्भर करती है । सामान्यतया मूँगॅफली को 450 से 650 मिमी पानी की आवश्यकता होती है । मूँगफली की फसल फूलोंके आने, सुईयों के बनने, फॅलियों के बनने एवं उनके विकास की अवस्था और परिपक्व होनेकी अवस्था तक मृदा नमी के प्रति संवेदनशील होती है । अच्छी उपज और कुशल जल उपयोग के लिए मूँगफली में नमी संवेदनशील अवस्थाओं पर उपलब्ध मृदा जल

क्षमता की 25 प्रतिशत तथा अन्य अवस्थाओं पर 50 प्रतिशत कमी होने पर सिंचाई करनी चाहिए ।

यदि सिंचाई जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो तो, इष्टतम उपज प्राप्त करने के लिये कुल 8 सिंचाईयों यथा: पलेवा, बुवाई के 25 दिन बाद, तत्पश्चात 4 सिंचाईयॉ 10 दिनों के अंतराल पर तथा अंतिम दो सिंचाईयॉ 12-15 दिनों कं अंतराल पर करनी चाहिए ।

यदि सिंचाई जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो तो, एक सिंचाई बुवाई के 25 दिन बाद तथा तत्पश्चात 2सिंचाईयॉ 15 दिनों के अंतराल पर बुवाई के 45 से 75 दिनों के मध्य करने से उपज में होने वाले हानि को कम किया जा सकता है ।

बलुई और दोमट बलुई मृदाआं में कम अंतराल पर किन्तु प्रति सिंचाई पानी की कम मात्रा उपयोग करनेसे फली की उपज बढ़ती है ।

मूँगफली की फसल में सामान्यतया बाढ़ पद्धति से सिंचाई की जाती है । परन्तु नाली विधि से सिंचाई करने पर पानी की बचत की जा सकती है तथा उपज में बढ़वार होती है । सूक्ष्म सिंचाई पद्धतियोंके अपनाने से सिंचाई जल की बचत तथा उपज में बढ़वार होतीहै । बूँद-बूँद (टपक) पद्धति से सिंचाई जल के साथ पोषक तत्व भी दियेजा सकते हैं जिससे पोषक तत्व उपयोब क्षमता तथा उपज दोनों में बढोतरी होती है । बलुई मिट्टी वालेक्षेत्रों में मूँगफली उत्पादन के लिए फव्वारा सिंचाईपद्धति बहुत उपयोगी रहती है ।

फसल कटाई और सुखाना :

मूँगफली की फसल में सभी फलियॉ एक साथ परिपक्व नहीं होती हैं । इसलिए जब 75-80 प्रतिशत फलियॉ पूरी तरह से पक जाए, कटाई कर लेनी चाहिए । मूँगफली की परिपक्वता का अंदाज पत्तियों के पीली पड़ने, पत्तियों पर धब्बे बनने, पुरानी पत्तियों के गिरने, छिलके के अंदरके भाग का काला पड़ना और बीज के छिलके (टेस्टा) का रंग पूरी तरह से विकसित होना, आदि से लगाया जा सकता है । जल्दी एवं देरी से कटाई बीज की गुणवत्ता पर प्रभाव डालती है तथा कटाई के समय फली को नुकसान पहुँचाती है । फलियों को तुडाई के बाद छाया में तब तक सुखाना चाहिए जब तक कि फलियों में नमी की मात्रा 7-8 प्रतिशत तक रह जाए ।

पादप रोग प्रबंधन :

1. **कालर विगलन रोग**

   नियंत्रण :

   - रोग प्रतिरोधी किस्मों का चुनाव करें ।
   - गेहूँ एवं चने के साथ फसल-चक्र अपनाएँ तथा मोठ के साथ मूँगफली की अन्त:फसल प्रणाली अपनाएँ ।

- गहरी बुवाई न करें ।
- नीम या अरंडीकी खली 500 किग्रा/हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें ।
- *ट्राईकोडरमा हर्नियानम या ट्राईकोडरमा विरिडी* का 10 ब्राम/किग्रा बीज की दर से बीजोपचार करें ।
- बीजों को कार्बेन्डालिम या मैंकोजेब 2-3 ग्राम/किग्रा बीज की दर से उपचारित करें ।

2. **अफला जड़/पीला मोल्ड**

नियंत्रण :

- फसल-चक्रअपनाएँ ।
- उच्च गुणवत्ता युक्त एवं रोग मुक्त बीजों को ही बुवाई हेतुप्रयोग करें ।
- बीज के छिलके (टेस्टा) को प्रसंस्करण या बुवाई के समय टूटनेसे बचायें ।
- बीजों को थायरम या कार्बेन्डाजिम 2-3 ग्राम/किग्रा बीज की दर से उपचारित करें ।

3. **तना विगलन रोग**

नियंत्रण :

- फसल अवशेषों को गेहरी जुताई कर 20-25 सेमी गहराई पर दबा दें ।
- कपास, गेंहूँ, मक्का, ज्वार, प्याज एवं लहसुन के साथ फसल-चक्र अपनाएँ ।
- रोग रोधी किस्में जैसे टी.जी.51, डी.एच.-8, आई.सी.जी.वी.-86590, जी.जी.-16, और ओ.जी.52-1 उगानी चाहिए ।
- कालर विगलन रोग में दिये जैव नियंत्रकों तथा नीम या अरंडी की खली का प्रयोग करें ।
- बीजों को कार्बेन्डजिम 2-3 ग्राम/किग्रा की दर से उपचारित करें ।

4. **शुष्क जड़ विगलन रोग**

नियंत्रण :

- फलियों एवं दानों को नुकसान पहुँचने से बचायें ।
- कालर विगलन रोग में वर्णित जैव नियंत्रकों का प्रयोग करें ।
- बीजों को कार्बेन्डजिम या थायरम 23 ग्रा/क्रिग्रा बीज की दर से उपचारित करें ।
- रोग प्रतिरोधक किस्में जैसे जी.जी.-8, जी.जी.-16 या कादिरी-9 उगानी चाहिए ।
- स्वस्थ बीजोंको उपयोग एवं कतारों के बीच की दूरी कम रखनी चाहिए ।

5. **अगेती एवं पछेती टिक्का रोग**

नियंत्रण :

- रोग प्रभावित पौधों को जमीन में दबा देना चाहिए या जला देना चाहिए ।
- रोगरोधी किस्में उगानी चाहिए जैसे -

- *अगेती टिक्का* आई.सी.जी.एस.-44, आई.सी.जी.एस.-76, एम-335, बी.जी.-∗3, सोमनाथ,सीएस.एम.जी-84-1, एम.522, प्रथा और जी.जी.-7 ।
- *पछेती टिक्का* गिरनार-1, आर.र्जी.-141, आई.सी.जी.वी-86590, आई.सी.जी.वी.86325, टी.ए.जी.-24, के-134, डी.आर्.जी.-12, डी.आर.जी-17, आर-8808, कदिरी-4, ए.एल.आर-1, ए.एल.आर-2, ए.एल.आर-3, बी.एस.आर-1, ओ.जी.-52-1, सीओ-3, सीओ-4, वी.आर.आई-5, सी.एस.एम.जी.-84-1, सी.एस.एम.जी्∗884, एम्-335, कदिरी-6, कदिरी6, अभया और बी.जी.-3, जी.पी.बी.डी.-4 ।
- बाजरा या ज्वार के साथ अन्त:फसल (3:1) अपनानी चाहिए ।रोग के लक्षणदिखनेपर, नीम की पत्तियों का रस (20-50 मिली/लीटर पानी) या निम्बोली का रस (50 मिली/लीटर पानी) या कार्बेन्डाजिम (1-1.5 ग्राम/लीटर) + मेंकोजेब (2-2.5 ग्राम/लीटर) का 2-3 सप्ताह के अंतराल पक दो या तीन बार छिडकाव करना चाहिए।

6. **आल्टरनेरिया पर्णअंगमारी रोग**

नियंत्रण :

- रोगग्राही किस्मों को उगाने से बचना चाहिए ।
- टिक्का रोग में वर्णित रसायनों को प्रयोग करें ।

7. **रोली (गोरूई) रोग**

नियंत्रण :

- अगेती बुवाई (जून के पहले पखवाड़े) करनी चाहिए ।
- स्वत: उगे मूँगफली के पौधों को नष्ट कर देना चाहिए ।
- बाजरा वा ज्वार के साथ अन्त:फसल (3:1) अपनानी चाहिए ।
- आई.सी.जी.वी.-86590, जी.पी.बी.डी.-4, ए.एल.आर-2, आदि रो प्रतिरोधी/सहनशील किस्मों का उपयोग करें ।
- रोग के लक्षण दिखनेपर, नीम की पत्तियोंका रस (20-50 मिली/लीटरपानी) या निम्बोली का रस (50 मिली/लीटर पानी) या मेंकोजेब (2-25 ग्राम/लीटर)या क्लोरोथालोनिल (1-1.5 ग्राम/लीटर) वा ट्राईडीमेफॉन @ 250 ग्राम/हेक्टेयर रोग को कम करने में सहायक है ।

8. **कलिका ऊतक क्षय रोग**

नियंत्रण :

- रोग प्रतिरोधी किस्में उगानी चाहिएजैसे-कालाहस्ती, अजेया, कादिरी-3, कादिरी-4, आई.सी.जी.एस.-5, आई.सी.जी.एस.-10, आई.सी.जी.एस.-11, आई.सी.जी.एस.-14, आर.जी.-141, आर.एस.एच.-41, टी.ए.जी.-24, के-134, डी.आर.जी.-2, आर-808, बी.एस.आर.-1, जे.सी.जी.-88, ए.एल.आर.-3, सी.ओ.-

3, बी.ए.यू.-13, बी.-95, आई.सी.जी.वी.-86325, जी.जी.-16, अपूर्वा, एस.जी.-99, गिरनार-2, और सी.एस.एम.जी.-884 उगायें ।

- मध्य भारत में अगेती बुवाई तथा उत्तर भारतमें पछेती बुवाई करनी चाहिए ।
- कतार से कतार की दूरी कम रखें ।
- बाजरा का ज्वार के साथ अन्त-फसल (3:1) अपनानी चाहिए ।

9. **तना ऊतक क्षय रोग**

नियंत्रण :

- खरपतवारों का नियंत्रण करना चाहिए ।
- पौधों की उचित संख्या बनाए रखें ।
- अरहर और ज्वार या अरहर और अरंडी या तिल, अरंडी, मक्का, बाजरा, ज्वार के साथ वैकल्पिक फसल प्रणाली अपनानी चाहिए ।

कीट प्रबंधन :

मूँगफली की फसल में विभिन्न कीटों का प्रकोप होता है किन्तु, कुछ कीटों द्वारा मूँगफली की फसल में काफी नुकसान पहुंचाया जाता है । तालिका 6में मूँगफली की फसल में लगने वाले प्रमुख कीट, उनके द्वारासंभावित नुकसानतथा कीटों के प्रकोप का समय दर्शाया गया है ।

तालिका-6 : मूँगफली के मुख्य कीट, संभावित नुकसान तथा उनके प्रकोप का समय

कीट	संभावित नुकसान (%)	प्रकोप का समय
पर्ण सुरंगक (लीफ़ माइनर)	16-92	मार्च-अक्टूबर
फलीछेदक(*स्पोड़ेपटोरा लिट्रा)*	15-30	मार्च-अक्टूबर
रोयेंदार सूंडी (डेयरी केटरपिलर)	26-100	जून-अक्टूबर
थ्रिप्स	15-28	मार्च-अक्टूबर
चेंपा	0-40	जुलाई-सितम्बर
फुदका	9-22	मार्च-अक्टूबर
सफ़ेद लंट (गिडार)	20-100	अगस्त-अक्टूबर
दीमक	5-40	सितम्बर-अक्टूबर

1. **पर्ण सुरंगक (लीफ माइनर)**

नियंत्रण :

- वयस्क कीटों को चिपकने वाले या रोशन जाल से पकडकर नष्ट करना ।
- कीटरोधी किस्में जैसे बी.जी.-2 या आई.सी.जी.वी. 86031 उगाना ।
- कीटों को फेरोमोन जाल द्वारा पकड़करनष्ट करना (25/हेक्टेयर)
- अगेती बुवाई करें, सोयाबीन के साथ अन्त:फसल प्रणाली अपनायें ।

- बीजों को 50 प्रतिशत कार्बोफ्यूरान का 5 ग्राम सक्रिय तत्व/100 ग्राम बीज की दर से उपचारित करें ।
- नीम उत्पादों का प्रयोग करें ।
- कार्बोफ्यूरान 25 ईसी (1-2 मिली/लीटर पानी) या क्लोरोपाईरीफॉस 20 ईसी (2-2.5 मिली/लीटर) या डाईमेथोयट 30 ईसी (1.2-2 मिली/लीटर) या क्यूनालफॉस 25 ईसी (1-2 मिली/लीटर) का प्रयोग करें ।

2. **फॅली छेदक (तम्बाकू की सूंडी) (*स्पोड़ेपटोरा लिट्रा*)**

   नियंत्रण :
   - गर्मियों में गहरी जुताई करें जिससे कीट की सुषुप्तावस्था सूर्य की रोशनी में नष्ट हो सके ।
   - मेडों पर अरंडी की बुवाई करनी चाहिए ।
   - कीट रोधी किस्में जैसे आई.सी.जी.वी. 86590 उगानी चाहिए ।
   - अंड गुच्छों तथा लार्वा को हाथ से पकडकर नष्ट करना चाहिए
   - निम्बोली के रस का 50 मिली/लीटर पानी की दर सेप्रयोग करें ।
   - जहर चारे का प्रयोग (5 किग्रा चावल की चोकर, 1 किग्रा गुड या मोलासेस,0.5 किग्रा कार्बारित 50 प्रतिशत चूर्ण/एकड़) प्रयोग करें ।
   - जैविक कीट नियंत्रकों जैसे-*टेलेनोमस रीमस* का 50,000 / हेक्टेयर (3 बार) की दर से प्रयोग करें ।
   - शाम के समय एन.पी.वी. का 1.5 x 10^{12} पीओबी/हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें ।
   - क्यूनालफॉस 25 ईसी या क्लोरोपाईरीफॉस 20 इ्रसी (2-2.5 मिली/लीटर) का छिड़काव प्रयोग करें ।
   - फेरोमाने जाल का प्रयोग (10 / हेक्टेयर) करें ।

3. **फली छेदक (चने की सूंडी) (*हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा*)**

   नियंत्रण :
   - *ट्राईकोग्रामा चिलोनिस* (एक लाख/हेक्टेयर) या *क्राईसोपर्ता स्पेसीज* (50,000/हेक्टेयर) का बुवाई के 40-50 दिन बाद प्रयोग करें ।
   - हा.एन.पी.वी. का 250 एल.ई/हेक्टेयरकी दर से प्रयोग करें ।
   - *बेसीलस थूरिन्जाईनसिस* का 2 मिली/लिटर की दर से प्रयोग करें ।
   - बाजरा या अरहर के साथ 2:1 के अनुपात में अन्त: फसलीकरण अपनायें ।
   - फेरोमाने जाल (10/हेक्टेयर) द्वारा कीटों को पकड़ना।
   - क्यूनालफॉस 25 ईसी (2-2.5 मिली/लीटर) का प्रयोग ।

4. **रोयेंदार सूंडियॉ (हेयरी केटरपिलर्स)**

   नियंत्रण :
   - गर्मियों में गहरी जुताई द्वारा कीट के अण्डों एवं सुपुष्तावस्थाओंको नष्ट करें ।

- जून-अगस्त में रोशन जाल द्वारा कीटों को आकष्र्ज़ित कर नष्ट करें ।
- चंवला को ट्रेप फसल के रूप में उगायें ।
- अरंडीया अरहर हो 1:11 के अनुपात में अन्त: फसल के रूप में उगायें ।
- खेत के चारों ओर गहरी खाई बनाकर 2 प्रतिशत मिथाईल पेराथियान या 5 प्रतिशत कार्बारिल का प्रयोग करें ।
- अंड गुच्छों एवं लार्वों को हाथों से इकट्ठा करके नष्ट कर देवें ।
- खेत के चारों तरफ रतनजोत या आक के पोधों को वानस्पतिक जाल के रूप में उगायें ।
- नीम के तेल (5 मिली/लीटर पानी) के साथ डिटरजेंट पाउडर (1 ग्राम/लीटर) या नीम के बीजों का रस (50 मिली/लीटर पानी) का छिड़काव करें ।
- आ.एन.पी.वी. का 200 एल.ई./एकड़ की दर से छिडकाव करें ।

5. **चूसने वाली कीट (चेंपा, फुदका, थ्रिप्स)**

नियंत्रण :

- ट्रेप फसलों को उगाना जैसे थ्रिप्स के लिए बाजरा तथा चेंपा एवं फुदका के लिए चंवला उगाना ।
- कीटरोधी किस्में उगाना जैसे-
  - चेंपा : बी.जी.-2 एवं गिरनार ।
  - फुदका : गिरनार 1, आई.सी.जी.एस. 11, एम.एच.-1, पी.ओ.एल.2 एवंएस-206
  - थ्रिप्स : गिरनार ।
- मेलाथियान 50 ईसी (2-2.5 मिली/लीटर), डाईमेथोयट30 ईसी (1.2-2.0 मिली/लीटर) एवं क्यूनालफॉस 25 ईसी (2-2.5 मिली/लीटर) का प्रयोग करें ।
- जैविक नियंत्रकों का प्रयोग जैसे -
  - चेंपा : मेनोचिलस सेक्समाकुलाटुस, कोक्सीनेला सेप्टमपुन्तेटा, कोक्सीनेला माकुलाटा, ब्रुमुख सुचुरलिस, आदि (1250वयस्क या लट/हेक्टेयर की दर से दो बार प्रयोग) ।
  - फुदका : क्रासोपेल्पस के लिए प्राकृतिक दुश्मनों का संरक्षणजैसेशरण फसलोंको उगाना-चंवला ।

6. **सफेद लट (गिडार)**

नियंत्रण :

- गर्मियों में गहरी जुताई करें जिससे कीट की सुषुप्त अवस्थाऐ सूर्य की रोशनी से नष्ट हो जाए ।
- बृहद स्तर पर वयस्क कीटों को यंत्रिक विधियों से पकड़कर नष्ट करना ।
- सामुदायिक स्तर पर रोशन जाल एवं फेरोमोन जाल का प्रयोग ।

- यदि संभव हो सके तो वर्षा ॠतु के आरम्भ होने के पूर्वसिंचाई देकर फसल की बुवाई करें जिससे फसल कीट के प्रकोप होने से पूर्व ही अच्छी अढवारपकड लें ।
- क्लोरोपाईरीफॉस 20 ईसी 12.5-25 मिली/किग्राबीज या क्यूनालफा ॅस 25 ईसी 25 मिली/किग्रा बीज की दर से उपचारित करें ।
- बुवाई से पूर्व मृदाको फोरेट 10 प्रतिशत कण @ 25 किग्रा/हेक्टेयर या क्यूनालफॉस 5 प्रतिशत करण @ 25-30 किग्रा/हेब्टेयर की दर से उपचारित करें ।
- इमिडाक्लोपाइ्रीड 200 एस.एल @ 5 मिली/किग्रा बीज या क्लेरोडेनड्रोन पत्तियों का रास 5 मिली या नीम का तेल 20 मिलीकिग्रा की दर से बीलों को उपचारित करना चाहिए ।

7. **दीमक**

नियंत्रण :

- दीमक की बामियॉ एवं रानी दीमक को नष्ट करना ।
- बुवाई से पूर्व गहरी जुताई करें तथा सरसों के अवशेषों से पलवार बिछाएं ।
- बुवाई के समय फोरेट 10 प्रतिशत कण @ 10 किग्रा/हेक्टेयर की दर से भूमि उपचार करें ।
- क्लोरोपाईरीफॉस 20 ई.सी. @ 12.5-25 मिली/किग्रा ी बीज की दर से बीजोपचारकरें ।
- अपेक्षाकृत कम संवेदनशील किस्मों जैसे सी.ओ.-1, बी.जी.-5 एवं जे.एल.-24 का चुनाव करें ।
- खेत में बुवाई से पूर्व *बेवेरिया बेसियाना* नामक जैव नियंत्रक (बावो-एजेंट) की 5 किग्रा मात्रा / हेक्टेयर ताजे गोबरके साथ खेत में छिडककर जुताई करनी चाहिए ।

8. **ब्रूचिड**

नियंत्रण :

नीम के बीजों का रस (50 मिली/लीटर पानी) या नीम का कच्चा तेल एवं टीपोल (20 मिली/लीटर पानी) की दर से छिडकना चाहिए ।

भंडारण करने से पहले फली को अच्छी तरह सुखाना, बोरियों को साफ़ करना एवं उपयुक्त गोदाम का चयन करना चाहिए । गोदाम को अच्छी तरह से बंद कर देवें ।

वायु अवरोधित गोदाम में एल्यूमिनियम फॉस्फाइड की 2-3 गोलियॉ/टन बीज की दर से रखें ।

सूत्रकृमि प्रबंधन :

- मूँगफली की फसल में मुख्यत: जड़-ग्रंथि, जड़-घाव, स्तंभन (कालाहस्ती मेलेडी रोग का कारण) आदि सूत्रकृमियों का प्रकोप देखने में आया है ।

- जड-ग्रंथी सूत्रकृमियों की संख्या उनके ग्राही पादपों की अनुपस्थितिमें कम होती है, इसलिए अनाजवाली फसलों के साथ फसल चक्र अपनाने से सूत्रकृमियों का प्रकोप कम किया जा सकता है ।
- गहरी ग्राष्मकालीन जुताई से पादप परजीवी सूत्रकृमियोंकी संख्या में कमी कर सकते है ।
- ग्रीष्म ऋतु में पारदर्शी पोलीथिन पलवार (25-50 माईक्रोन) द्वारा 15 दिनों तक मृदा तापन करने से सूत्रकृमियों का नियंत्रण कर सकते हैं ।
- बहुत से खरपवतार जड-गंथि सूत्र कृमि ग्राही होते हैं, अत: उचित खरपतवार नियंत्रण अपनायें ।
- कालाहस्ती मेलेडी रोग के लिए प्रतिरोधी किस्में का प्रयोग करे, जैसे-तिरूपति-2 और तिरूपति-3 ।
- नीम एवं अरंडी जैसे कार्बनिक सुधारकों का एक टन/हेक्टेयर की दर से उपयोग करना चाहिए । इसका कार्बासल्फॉन (25 डी.एस.) 3% (W/W) की दर से संयोजन सूत्रकृमियों की संख्या को कम करनेके साथ उपज बढ़ानेमें सहायक है ।
- मूँगफली के साथ अरंडी का अन्त: फसल प्रणाली अपनायें ।
- कार्बोफ्यूरान एक किग्रा/हेक्टेयर की दर से उपयोग करने से जड-ग्रंथि सूत्रकृमियों की संख्या में कमी की जा सकती है ।
- कटाई के बाद पेकिंग एवं भंडारण की उन्न्त तकनीकियों का उपयोग करना चाहिए ।

अफ्लाटोक्सिन प्रबंधन

- साफ़-सुथरी कृषण क्रियायें करनी चाहिए ।
- कम/मध्यम अवधी वाली किस्मों का चयन करना चाहिए ।
- कीट एवं बीमारियों से फसल को बचाना चाहिए ।
- फसल की उचित समय (जब छिलके के अन्दर का भाग काला होने लगे) पर कटाई करनी चाहिए ।साफ फलियों को क्षतिग्रस्त फलियों में मिश्रित नहीं करना चाहिए ।
- फलियों को सुरक्षित नमी स्तर तक सुखाना चाहिये । अच्छी सूखी हुई फली को हाथ्ज्ञ से छीलनेपर कुछ आवाज सुनाई देती है ।
- उत्पाद को नई एवं साफ़ बोरियों में भरकर, भण्डार गृह में लकड़ी के स्टोड पर दीवार से एक मीटरके अंतराल पर जहॉ वायु का उचित आवागमन हो रखना चाहिए ।

खरपवतार मुक्त मूँगफली की फसल

मृदाजनित कवकीय रोग

अफ्ला जड़/पीला मोल्ड

शुष्क जड़ विगलन

कालर विगलन

तना विगलन

कुसुम-उत्पादन बढ़ाने के उपाय

प्रद्युम्न यादव, एच.पी.मीना एवं एन.मुक्ता

भारत में रबी मौसम की यह प्रमुख फसल है ।इसको करडी तथा कुसुम्बा के नाम से भी जाना जाता है । भारत का कुसुम उत्पादन व क्षेत्रफल में प्रमुख स्थान है । इसमें उच्च गुणवत्ता का तेल पाया जाता है । जिसकी मात्रा सामान्यत: 25-35 प्रतिशत होती है । कुसुम में असत्प्त वसा अम्ल (लिनोलिक अम्ल) प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इसके तेल में 14-15 प्रतिशत प्रोटीन, 32-34% रेशा तथा खनिज पदार्थ व विटामिन (ए.डी.ई.) भी पाया जाता है ।

खेती के क्षेत्र :

कुसुम की खेती मुख्यतय: महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ व उड़ीसा मं की जाती है ।

जलवायु :

कुसुम शुष्क तथा नम दोनों प्रकार के वातावरण से उगने में सक्षम है । यह कम तापमान को झेलने में भी सक्षम है । इसकी खेती शुष्क या कम नमी वाले क्षेत्रों में की जाती है । क्योंकि कुसुम अधिक वर्षा को सहन नहीं कर पाती है ।

मृदा :

यद्यपि कुसुम की फसल विभिन्न प्रकार की मदाओं में ली जा सकती है । परन्तु भरपूर पैदावार के लिए मध्यम और अधिक उर्वरता वाली मिट्टी जो गहरी नमी बरकरार रखें और प्राय: हल्का पी.एच.मान (पी.एच.6-7) रखे में उगायी जाती है । भारी म्ट्टिी जिसमें जल भराव की समस्या हो इसके उत्पादनमें बाधक होती है । कुसुम को लवणीय मृदाओं (विद्युत परिचालकता 4 डेसी साइयन्स प्रति मीटर) में भी उगाया जा सकता है ।

मृदा तथा नमी को संरक्षित करके कुसुम की अधिक पैदावार ली जा सकती है । इसकेलिए मृदा क्षरण को रोकना तथा बारिश के पानी को संरक्षित करना महत्वपूर्णहै । मृदा संरक्षण के लिए हर दो पंक्तियों के बाद ऐ पंक्ति को खाली छोड़ दें व खालीपंक्ति के एक कुंड खुला छोड़ दों । खरपतवार को दूर करने के लिए मानसून के दौरान 3-4 बार हल्की जुताई करें ।

किस्में/संकर :

सभी राज्यों के लिए डी.एस.एच.129, मंजीरा, नारी-6, फुले कुसुम, भीमा, नारी एन एच-1, सुझायी गयी है ।

फसल चक्र :

लगातार एक ही खेत में कुसुम की खेती करने से कवक जन्म रोग जैसे विल्ट तथा

रूट रोट का स्तर बढ़ जाता है । इन रोगों से बचाव के लिए उस क्षेत्र की पारम्परिक अनाज व दाल की फसलों को 2 या 3 साल में फसल चक्र में शामिल करें ।

बुआई का समय :

शुष्क क्षेत्रों में मृदा में संरक्षित नमी का भरपूर उपयोग करने के लिए कुसुम की बीजाई उचित समय पर करना बहुत महत्वपूर्ण है । सामान्यत: सितंबर/अक्टूबर में पहली बारिश होनेके तुरंत बाद कुसुम की बुआई करनी चाहिए । यदि सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो बुआई के समय को एक दो सप्ताह बढ़ा सकते है ।

बीज दर :

पारम्परिक क्षेत्रों में बीजदर 7.5-15 किग्रा/है. के बीच रखनी चाहिए तथा गैर पारम्परिक क्षेंत्रों में 15-20 किग्रा./है. की आवश्यकता होती है ।

बीज उपचार :

बिजाई से पहले बीज को लगभग 25 घंटे जल में भिगोऐ तथा 4 घंटे तक धूप में सुखाऐं । कवक जन्म रोगों की रोकथाम के लिए बीजाई से पहले से थाईरम, डाईथेन एम 45.32/केजि बबीज या कार्बेनडाइजम 2 ग्रा/किग्रा बीजमें उपचार करें ।

छितराना :

बीज अंकुरित होने के 15-20 दिन के बाद प्रत्येक हिल पर एक स्वस्थ अंकुकको छोड़कर शेष सभी को उखाड़ देना चाहिए क्योंकि सामान्य बीज दर से बुआई करने पर 40 से 60 प्रतिशत ज्यादा पौधे उग जाते हैं ।

सिंचाई :

यदि बुआई के समय मिट्टी में पर्याप्त नमी नहीं है तो एक हल्की सिंचाईदे कर बीजाई करें । उसके पश्चात् मृदा की नमी की स्थिति के अनुसार जीवन रक्षक सिंचाई दें । जीवन रक्षक सिंचाई पुष्पन के 35 या 60 दिन के बाद मिट्टी में नमी के अनुसार दें । अधिक सिंचाई कुसुम के लिए घातक होती है ।

कीट प्रबन्धन

अफिड्स :

ये कीट तनों, पत्तों तथा वृतों से रस चूसते हैं और मधुरस जैसे पदार्थ का स्त्रावण करते हैं । जिससे काजल जैसी फंफूद बनती है । जो प्रकाश संश्लेषण में बाधक होती है । जिससे पौधे सूख जाते हैं ।

नियंत्रण :

- देर से बुआई न करें ।

- बोआई के 40 और 60 दिनों के बाद डाइमेयेएट (0.05 प्रतिशत) या मेंथिल पैराथियान (0.05 प्रतिशत) या मोनोक्रोटोफोस (0.05 प्रतिशत) या क्लोरो पाइरोफोस (1.5 प्रतिशत) का छिड़काव करें ।

संपुट बेधक :

यह पत्तों प्ररोहाग्रों व मुडक को नुकसान पंहुचाता हैं ।

नियंत्रण :

डाइमेंयोट (0.07 प्रतिशत) या एण्डोसल्फान (0.07 प्रतिशत) का 500 लीटर छिड़काव करें ।

आल्टरनेरिया पर्ण चित्ती :

वर्षा की बौछारों से पत्तियों पर काले धब्बे बन जाते हैं ।

नियंत्रण :

रोग की पहचान होने पर मानकोजब (0.25 प्रतिशत) का छिड़काव करें ।

साइकोसेल का प्रयोग :

वर्षा आश्रितक्षेत्रों में पुष्पन प्रारंभन अवस्था में साइकोसिल @ 500 पी.पी.एम. का छिड़काव करने से बीज उपज में वृद्धि होती है । एक हैक्टेयर के लिए 300 लीटर साइकोसिल विलयन का छिड़काव करें ।

उर्वरक का प्रयोग :

कुसुम के लिए नाइट्रोजन, फारुोरस व पोटाश के मात्रा क्रमश: 20, 40 एवम 40 / हैक्टेयर सुझायी गयी है । पारम्परिक क्षेत्रों में (महाराष्ट्र व कर्नाटक) में बीजाई के 2-3 सप्ताह पहले उर्वरक देना चाहिए । गैर पारम्परिक क्षेत्र जहॉ दो फसल ली जाती है उनमें बीजाई के समय 50 प्रतिशत नाईट्रोजन व 100 प्रतिशत फास्फोरसकीसिफारिश की जाती है ।

कटाई व गहाई :

जब पत्तियां व तना सूख जाए तब कुसुम की कटाई की जा सकती है । बीज निकालने के लिए बैल या ट्रैक्टर से गहाई करें । बीज साफ करने के लिए थ्रेशर का प्रयोग भी कर सकते हैं ।

कुसुम

कुसुम के एफएलडी क्षेत्र में किसान

रामतिल की उन्न्त सस्य क्रियाऐं

प्रद्युम्न यादव एवं एच.पी.मीना

भूमिका :

रामतिल आदिवासी इलाको की प्रमुख तिलहनी फसल है । भारत दुनिया के रामतिल उत्पादक देशों में अग्रणी है । शुष्क तथा पहाड़ी क्षेत्रों में कम लागत से इसकी खेती की जा सकती है । इसके तेल में 70% तक असंतृप्त वसीय आम्ल पाऐ जाते है । इसके तेल में हानिकारक पदार्थ नहीं होने के कारण सेहत के लिए बहुत अच्छा माना जाता है । खाने के अलावा इसके तेल से पेन्ट, साबुन, घर्षण तेल एवम् सोन्दर्य प्रसाधन बनाऐ जाते है । इसकी खली मवेशियों को खिलाने में उपयोग की जाती है ।

खेती के क्षेत्र :

मुख्यतया इसकी खेती मध्य प्रदेश, उड़िसा, छतिसगढ़, महाराष्ट्र, आन्द्र प्रदेश व कर्नाटक में की जाती है ।

जलवायु :

इसकी खेती सभी प्रकार की जलवायु में की जा सकती है । मुख्यतया शुष्क व पहाड़ी क्षेत्र जहॉ सामान्य से कम वर्षा होती है इसकी खेती की जाती है ।

किस्मे :

रामतिल की विभिन्न परिस्थितियों में अनुशांसित किस्मों का वर्णन सारणी-। में दिया गया है ।

राज्य	**किस्में**
मध्य प्रदेश एवम् छत्तिसगढ़	JNC-1, JNC-6, JNS-9
महाराष्ट्र	IGP-76, N-5, IGPN-2004-1
उड़िसा	GA-10, उत्कल रामतिल-150
बिहार व झारखंड	बिरसा रामतिल-1, पूसा-1, BNS-8
कर्नाटक	No.71, KBN-1, RCR-18
गुजरात	गुजरात रामतिल-1, NRS-96-1
तमिलनाडु	पेथुर-1
राजस्थान	JNC-1, JNC-6, JNS-9
पश्चिमी बगांल	JNS-9
पूर्वी राज्य	IGP-76, INS-9, IGPN-2004-1

मृदा :

रामतिल की खेती के लिए दोमट मृदा तथा रेतीली मृदा जिसका पी.एच. मान 5.5 से

6.5 हो उपयुक्त रहती है ।

ईन्टर क्रोपिंग :

रामतिल को प्राय: पछेती खरीफ या अगेती रबी की फसल के रूप में उगाया जाता है । एकल फसल के रूप में रामतिल ज्यादा लाभ नहीं देती है । इसके लिए इसको इन्टरक्राप के रूप में कम अवधि वाली फसलों के साथ सुझाया गया है । इसे दालें, बाजरा व दूसरी तिलहनी फसलों के साथ उगाने से अच्छा लाभ मिलता है । बिहार में इसे मुख्यतय: रागी, उड़द, चना, मुँगफली व चावल के साथ अगस्त के दुसरे सप्ताह से सितम्बर के प्रथम सप्ताह के बीच बोया जाता है ।

पौधे से पौधे के बीच की दुरी :

मृदा के प्रकार के अनुसार विभिन्न क्षेत्रों में पौधों की बीच की दुरी भिन्न भिन्न है पर सामान्यत: यह दुरी 30 x 10 सें.मी. की सुझायी गई है ।

खरपतवार :

बुआई के 15-20 दिनों के पश्चात फावड़े से खरपतवार निकालने चाहिए । अगर जरूरी हो तो इसके एक महीने बाद फिर से निराई करनी चाहिए ।

उर्वरकों का प्रयोग :

उर्वरकों के प्रयोग से पहले भूमि परिक्षण आवश्यक है । सामान्यत: इसके लिए 20 के.जि. N + 20 के.जि. P + 20 के.जि. K + 15 के.जि. $ZnSo_4$ / ha सुझाया गया है । जैविक खाद के उपयोग से रामतिल की फसल में अप्रत्यासित वृद्धि देखी गई है । 5 टन गोबर की खाद व 10 के.जी. N/हैं. की दर से देने पर अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है ।

कीट व रोग नियंत्रण :

रामतिल के मुख्य कीट व रोगों का विवरण व नियंत्रण को क्रमश: सारणी-2 व सारणी-3 में दर्शाया गया है ।

सारणी-2 : रामतिल के प्रमुख कीट व उनका नियंत्रण

कीट	नियंत्रण
रामतिल केटरपिल्लर	4% फोसालोन या 5% कार्बारिल का 20-25 कि.ग्रा./है. में छिड़काव करें
बिहार हेयरी केटरपिल्लर	अण्डो व लार्वा को इकट्ठा करके नष्ट कर दे 0.05% डाइक्लोरोफास का छिड़काव करें
चैपा या मॉहू	0.03% डाइमेथोयेट या 0.025% मिथाइल डेमेटोन का छिड़काव करें
सेमिलुपर	अण्डो व लार्वा को इकट्ठा करके नष्ट कर दे तथा 0.05% डाइक्लोरस का छिड़काव करें

सारणी-3 : रामतिल के प्रमुख रोग एवम् नियंत्रण

रोग	नियंत्रण
एलटरनेरिया पत्ती धेदक	0.3% थाइरम से बीजोपचार करें तथा 0.2% डइथेन एम 45 का 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें
खस्ता फंफूदी (पाउडरी मितड्ड)	0.2% वेटेबल सल्फर या 0.1% बेवस्टिन का छिड़काव करें
सेरकोसपोरा लीफ स्पोट	0.2% थाइरम + 0.1% बेविस्टिन से बीजोपचार करें 0.1% बेवस्टिन का पत्तियों पर छिड़काव करें
अबंर बेल	बुआई से पहले इसे हटा दे जो अंकुर इससे पीड़ीत हो उन्हें उखाड़ दे बुआई से पहले 1 के.जि. फ्लुक्लोरेलिन को एक हेक्टेयर में मिलाऐ

कटाई का समय :

अधिकतम उपज के लिए उचित कटाई समय का चुनाव बहुत महत्वपूर्ण है । बुआई के 100 दिन के पश्चात फसल की कटाई करना उचित है । इसमें जल्दी या देर करने से उपज में कमी आ सकती है ।

रामतिल के एफएलडी क्षेत्र

सरसों की उन्नत सस्य क्रियाए

प्रद्युम्न यादव, एच.पी. मीना एवं हरवीर सिंह

सरसों रबी की प्रमुख तिलहनी फसल हैं । इसके तेल में असंतृप्त वसीय अम्ल प्रचुर मात्रा में पाये जाते है । सरसों का भारतीय अर्थव्यवस्था में विशेष स्थान है ।

खेती के क्षेत्र :

भिन्न-भन्न राज्यों में बोआई का उपयुक्त समय भी अलग है । वैज्ञानिक खोज से पता चला है कि उन्नतशील सस्य विविधँ अपना कर अपने देश में भी 25 से 30 किंवटल प्रति हैक्टेयर की पैदावार आसानी से ली जा सकती है । देश भर में विभिन्न् राज्यों में कम उत्पादन के लिए चिन्हित मुख्य कारकों में से, तीन प्रमुख कारक है -

- उपयुक्त किस्मों का चयन नहीं करना
- असंतुलित उर्वरक प्रयोग एवं
- पादप रोग व कीटों की पर्याप्त रोकथाम न करना ।

इनमें से किसी एक भी कमी से फसल की पैदावार में भारी नुकसान हो जाता है । कुछ राज्यों में नमी की सीमित मात्रा एवं खरपतवारों का अधिक प्रकोप भी उपज पर प्रतिकूल प्रभाव डालते है ।

किसान निम्न बातों का ध्यान रखकर राई-सरसों का उत्पादन बढ़ा सकते है ।

भूमि की तैयारी :

यह फसल समतल और अच्छे जल निकास वाली ब्लुई दोमट से दोमट मिट्टी में अच्छी उपज देती है । ये जमीन गहरी तथा इनमें जल धारणा करने की अच्छी क्षमता वाली होनी चाहिए । अच्छी पैदावार के लिए जमीन का पी.एच. मान 7 होना चाहिए । अत्यधिक अम्लीय एवं क्षारीय मिट्टी इसकी खेती हेतु अच्छी नहीं है । जहॉ की जमीन क्षारीय है वहॉ प्रति तीसरे वर्ष जिप्सम 5 टन प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोगकरना चाहिए । जिप्सम की आवश्यकता मृदा पि.एच. मान के अनुसार भिन्न हो सकती है । जिप्सम को मई - जून में जमीन में मिला देना चाहिए । जहॉ भी भूमि लवणीय हो वहॉ पर खेत में पानी भरकर बाहर निकाल देना चाहिए, जिससे लवण पानी के साथ धुल कर बाहर चले जाए । अगर पानी के निकास का समुचित प्रबंध न हो तो प्रत्येक वर्ष सरसों लेने से पूर्व ढ़ेंचा भी हरी खाद के रूप में उगाना चाहिए ।

सिंचित क्षेत्रों में पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से और उसके बाद 3-4 जुताईया तवेदार हल से करने के बाद पाटा लगाना चाहिए । जिससे खेत में ढैले न बने । गर्मी में गहरी जुताई करने से कीड़े-मकोड़े नष्ट हो जाते है । अगर बोने से पूर्व भूमि में नमी की कमी है तो खेत मे प्लेव करना चाहिए । बोने से पूर्व खेत खरपतवार रहित होना चाहिए ।

बारानी क्षेत्रों में प्रत्येक बरसात के बाद तेवेदार हल से जुताई कर नमी को संरक्षित करना चाहिए । प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाना चाहिए । जिससे की भूमि में नमी बनी रहें तथा भाप बनकर न उड़े । अंतिम जुताई के समय 15 प्रतिशत क्यूनालफॉस 25 के.ग्रा.प्रति हैक्टेयर की दर से मिट्टी में मिला दे, ताकि भूमिगत कीड़ो की रोकथाम की जा सके ।

उन्नत किस्में :

किसानों को अपनी मिट्टी की किस्म, सिंचाई की उपलब्धता तथा बुवाई के समय के आधार पर उपयुक्त किस्मों का चयन करना चाहिए । किस्मों की औसत उपज, तेल अंश, परिपक्वता आदि प्राप्त करने के लिए उन्न्त तकनीकों को अपनाना आवश्यक है । सरसों की विभिन्न परिस्थितियों में अनुशंसित किस्मों का वर्णन सारणी-1 में दिया गया है ।

अगेती बुवाईतथा कम समय में परने वाली किस्में

किस्में	**पकाव अवधि (दिन)**	**पैदावार के लिए उपयफकत क्षेत्र**
पूसा महक (जे.ड़ी.-6)	100-110	पूर्वी भारत
एन.पी.जे.-112	100-110	पूर्वी भारत
कांति	110-115	उत्तर भारत
पूसा अग्रणी (सेज-2)	110-115	दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान
समय पर बुवाई वाली सिंचित क्षेत्र की किस्में		
पूसा मस्टर्ड - 21	137-152	पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान, उत्त्र प्रदेश
पूसा मस्टर्ड - 22	138-148	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान
आज जी एन - 73	127-136	मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान
क्रान्ति	125-135	हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान
पूसा बोल्ड	110-140	राजस्थान, गुजरात, दिल्ली, महाराष्ट्र
बसुंधरा	130-140	हरियाणा, मध्य प्रदेश, उत्त्र प्रदेश, दक्षिण राजस्थान
बसन्ती	130-145	उत्तर प्रदेश
आर.एच.-30	130-135	हरियाणा, पंजाब, पश्चिम राजस्थान
आर.एल.एम.-619	140-145	गुजरात, हरियाणा, जम्मू - कश्मीर, राजस्थान

संकर किस्में		
एन. एम. एच.-1	145-150	पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान
एन.आर.सी.एच.पी.-506	130-140	उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पूर्वी राजस्थान
पी.ए.सी.-432 (कोरल)	130-135	उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान
देर से बोई जाने वाली किस्में		
आशीर्वाद	125-130	उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश राजस्थान
नव गोल्ड	122-134	दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान
एन.आर.सी.एच.बी.-101	120-125	उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश राजस्थान
सी.एस.-56	113-147	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान
आर.जी.एन.-145	121-141	दिल्ली, पंजाब, हरियाणा
असिंचित क्षेत्र के लिए किस्में		
गीता	145-150	हरियाणा, पंजाब, राजस्थान
पूसा बहार	108-110	असम, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल
अरावली़	130-135	राजस्थान, हरियाणा
आर.बी.-50	141-152	दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान जम्मू, कश्मीर
लवणीय मृदा की किस्में		
नरेन्द्र राई-1	125-130	सभी लवणीय प्रभावी क्षेत्र
सी.एस.-52	135-145	सभी लवणीय प्रभावी क्षेत्र
सी. एस.-54	135-145	सभी लवणीय प्रभावी क्षेत्र

बोआई का उचित समय, बीज की मात्रा एवं बीज उपचार:

बुवाई का उचित समय किस्म के अनुसार सितम्बर मध्य से लेकर अक्टूबर अंत तक का है । अच्छे अंकुरण के लिए बुवाई के समय दिन का अधिकतम तापमान सामान्यता औसतन 32 डिग्री सेल्सियस से अधिक नहीं होना चाहिए । बीज की मात्रा प्रति हेक्टेयर 4 से 5 कि.ग्रा. पर्याप्त होती है । बोआई में देरी होने से उपज और तेल की मात्रा दोनों में कमी आती है ।

बीजोपचार के लिए कार्बेण्डाजिम (बविस्टिन) 2 ग्राम अथवा एप्रोन (एस.डी.35) 6 ग्राम किटकनाशक दवाई प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करने से फसल पर लगने वाले रोगों को काफी हद तक कम किया जा सकता है ।

उर्वरकों का उपयोग :

उर्वरकों का संतुलित उपयोग करने के लिए नियमित भूमि परीक्षण आवश्यक है । फसल मे खाद की मात्रा निर्धारित करने से पहले मृदा परीक्षण कराना आवश्यक है ।

एक हेक्टेयर में असिंचित फसल को 40-60 कि.ग्रा. नत्रजन, 20-30 कि.ग्रा. फास्फोरस व 20 कि.ग्रा. पोटाशा व सल्फर की आवश्यकता होती है तथा सिंचित को 80-120 कि.ग्रा. नत्रजन, 50-60 कि.ग्रा. फास्फोरस व 20-40 कि.ग्रा. प्रोटाश व सल्फर की भी आवश्यकता होती है ।

सिंचित स्थितियों में नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस, पोटाश व सल्फर की पूरी मात्रा को बुवाई के समय, बीज से कम से कम 5 से.मी. नीचे बुवाई करनी चाहिए तथा शेष आधी नत्रजनको पहली सिंचाई करने के बाद खेत में जब पैर चिपचिपाते हो तब बिखेरना (टॉप ड्रेसिंग) चाहिए । असिंचित फसल में सभी पोषक तत्वों की पूरी मात्रा को बुवाई के समय ही डाला जाता है ।

थायो यूरिया का प्रयोग :

थायोयूरिया पौधों की आन्तरिक कार्यिकी में सुधार लाता है । यह प्रभाव थायोयूरिया में उपस्थित सल्फर के कारण होता है । थायोयूरिया में करीब 42 प्रतिशत गंधक एवं 36 प्रतिशत नत्रजन होती है । सरसों की फसल में थायोयूरिया जैव नियामक के दो पर्णीय छिडकाव उपयुक्त पाये गये है । थायोयूरिया का 0.1 प्रतिशत धोल (500 लीटर पानी में 500 ग्राम थायोयूरिया) तैयार कर पहला छिडकाव फूल आने के समय (बुवाई के 50 दिन बाद) एवं दूसरा छिड़काव फलियाँ बनने के समय करना चाहिए ।

थायोयूरिया जैव रसायन के प्रयोग से सरसों फसल की उपज को 15 से 20 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है ।

जैविक खाद :

गोबर की खाद से प्रमुख तत्वों के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्व भी उपलब्ध होते है, भूमि की सरंचना में सुधार होता है व नमी संरक्षित होती है । अत: भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिए जैविकखादों का उपयोग आवश्यक है । सिंचित क्षेत्रों के लिए 8-10 टन प्रति हैक्टेयर तथा असिंचित क्षेत्र में 4-5 टन प्रति हैक्टेयर अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद बुवाई के करीब एक माह पूर्व खेत में डालकर जुताई कर अच्छी तरह मिला दें ।

सिंचित एवं बारानी दोनों प्रकार के क्षेत्रों में सल्फर घोलक जीवाणु (पी.एस.बी.) खाद (10-15 ग्राम प्रति1 किलो बीज) एवं एजोबेक्टर से बीजोपचार भी लाभदायक रहता है । इससे नत्रजन एवं फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है और उपज में वृद्धि होती है ।

पौधों का विरलीकरण :

कतार में बुवाई करने से अच्छी उपज प्राप्त होती है । सिंचित क्षेत्रों में कतार से कतार की दूरी 30 सेन्टीमीटर और पौधे से पौधे की दुरी 10-15 संन्टीमीटर होनी चाहिए । हाइब्रिड किस्मों या बारानी दशा में कतार से कतार एवं पौधे से पौधे के बीच की दूरी क्रमश: बढ़ाकर 45 सेन्टीमीटर एवं 15 सेन्टीमीटर रखनी चाहिए ।

खेतों में पौधों की उचित संख्या और समान पौध बढ़वार के लिए बुवाई के 15-20 दिन बाद पौधों का विरलीकरण आवश्यक रूप से करना चाहिए ।

खरपतवार नियंत्रण :

खरपतवार नियंत्रण खुरपी और खरपतवार नाशी रसायनों एवं हैण्ड हो आदि से की जाती है । खरपतवार को खेत से निकालने और नमी के संरक्षण के लिए पहली सिंचाई से पूर्व ही निराई-गुडाई करनी चाहिए । क्योंकि खरपतवार होने से सरसों के बीज की पैदावार में 60 प्रतिशत तक कमी आ जाती है ।

खरपतवार नियंत्रण के लिए फ्लूक्लोरिन (45 ई.सी.) दवा की एक लीटर सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर (2.2 लीटर दवा) की दर से 800 लीटर पानी में मिलाकर बुवाई के पूर्व छिड़काव कर भूमि में भली भांति मिला देना चाहिए अथवा पेन्डीमिथेलीन (30 ई.सी.) की 1 लीटर सक्रिय तत्व (3.3 लीटर दवा) को 800 लीटर पानी में मिलाकर बुवाई के तुरन्त बाद (बुवाई के 1-2 दिन के अंदर) छिड़काव करना चाहिये । पहली सिंचाई के बाद दो पहिये वाली हस्तचालित हो के द्वारा निराई - गुडाई करने से भी खरपतवारों का अच्छी तरह नियंत्रण किया जा सकता है एवं फसल अच्छी बढ़ती है ।

सिंचाई :

पहली सिंचाई 30 से 40 दिन के बीच फूल बनने की अवस्था पर करनी चाहिए । दुसरी सिंचाई कली बनने पर करनी चाहिए । जहॉ पानी की कमी हो या खारा पानी हो वहॉ सिर्फ एक ही सिंचाई करना अच्छा रहता है । यदि सिंचाई का पानी क्षारीय हो तो पानी की जॉच करवाकर उचित भाग में जिप्सम और गोबर भी खाद का प्रयोग करें ।

कीट एवं रोग प्रबन्धन :

सरसों की फसल को कीटों एसम् रोगों से काफी नुकसान पहुंचता है जिससे इसकी उपज में बहुत कभी हो जाती है । यदि इसके कीटों एवं रोगों को समय पर पहचान कर उनका नियंत्रण कर लिया जाये तो सरसों के उत्पादन में बढ़ोतरी हो सकती है । चैंपा या मॉहू, आरामक्खी, चितकबरा कीट, लीफ माइनर, बिहार हेयरी केटरपिल्लर आदि सरसों के

मुख्य नाशी कीट है । काला धब्बा, सफेद रतुवा, मृदुरोमिल आसिता, चूर्णल असिता एवं तना गलन आदि सरसों के मुख्य रोग है ।

सरसों के प्रमुख कीट

बिहार हेयरी केटरपिल्लर :

इस कीट की रोकथाम हेतु मेलाथियान 50 ई.सी. की 1.0 लीटर मात्रा को 500 लीटर पानी में डालकर प्रति हैक्टेयर छिड़कें ।

चैपां या माँहू :

जब फसल में कम से कम 10 प्रतिशत पौधों की संख्या चैपां से ग्रसित हो व 26-28 चैपां / पौधा हो तब छिड़काव करना चाहिये । डाइमिथेयट (रोगोर) 30 पायस सांद्रण या मोनोक्रोटोफास (न्यूवाक्रोन) 36 धुनलशील द्रव्य भी 1 लीटर मात्रा को 600-800 लीरटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर छिड़काव करना चाहिये । यदि दूबारा से कीट को प्रकोप हो तो 156 दिन के अतंराल से पुन: छिड़काव करना चाहिए । छिड़काव सांयकाल के समय करना चाहिये । ताकि पारागण करने वाले कीटों को कीटनाशी के विषैले प्रभावों से बचाया जा सके। यदि चौंपा के प्राकृतिक शत्रु जैसे लेडी बर्ड वीरल, सिरफिड तथा ग्रीन लेसविंग पर्याप्त मात्रा में हो तो छिड़काव नहीं करना चाहिये ।

आरा मक्खी :

इस कीट की रोकथाम हेतु मेलाथियान 50 ई.सी. मात्र को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर छिड़काव करना चाहिए । आवश्यकता पड़ने पर दुबारा छिड़काव करना चाहिए ।

पेन्टेड़ बग या चितकबरा कीट :

इस कीट की रोकथाम हेतु 20-25 किलोग्राम प्रति हैक्टैयर की दर से 1.5 प्रतिशत क्यूनालफास चूर्ण का भुरकाव करें । उग्र प्रकोप के समय मेलाथियान 50 ई.सी. की 500 मिली. मात्रा की 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें ।

सरसों के प्रमुख रोग

सफेद रतुवा या श्वेत किट्ट :

फसल पर रोग के लक्षण दिखते ही मैन्कोजेब (डाइथेन एम 45) / रिडोमिल एम.जेड.72 डब्लू.पी., फफूँदीनाशक में 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15-15 दिन के अन्तर पर करने से सफेद रतुवा से बचाया जा सकता है । अधिकतम तीन छिड़काव ही आर्थिक दृष्टिकोण से उचित होते है । फसल की सिंचाई आवश्यकता से अधिक न करें ।

काला धब्बा या पर्ण चित्ती :

इस रोग की रोकथाम हेतु आई - प्रोडियॉन (रोवरॉल) / मैन्कोजब (डाइथेन एम. 45) फफूँदीनाशक के 0.2 प्रतिशत धोल को रोग दिखते ही 15-15 दिन के अन्तर से अधिकतम तीन छिड़काव करें ।

चूर्णल असिता :

इस रोग की रोकथाम हेतु धुलनशील सल्फर (0.2 प्रतिशत) या डिनोकाप (0.1 प्रतिशत) भी वांछित मात्रा को घोल बनाकर रोग के प्रारम्भ होते ही छिड़काव करें । आवश्यकता होने पर 15 दिन के बाद पुन: छिड़काव करें ।

मृदुरोमिल असिता :

सफेद रतुवा रोग के प्रबंधन इस रोग के लिये भी उपयुक्त है ।

तना गलन (स्क्लेरोटोनिया तना सड़न) :

कार्बेण्डाजिम (0.1 प्रतिशत) फफूँदीनाशक का छिड़काव दो बार फूल आने के समय 20 दिन के अन्तराल (बुवाई के 50 वें व 70 वें दिन पर) करने से रोग का बचाव किया जा सकता है ।

कटाई :

सरसों की उचित पैदावार के लिए जब 75 प्रतिशत कलियॉ पीली हो जाये तब ही फसल की कटाई करें क्योंकि अधिकतर किस्मों में इस अवस्था के बाद बीज भार तथा तेल अंश में कमी हो जाती है । सरसों की फसल में बिखराव रोकने के लिए फसल की कटाई सुबह करनी चाहिए क्योंकि रात की ओस से सुबह फलियॉ नम रहती है । तथा बीज का बिखराव कम होता है ।

मडाई (गहाई) :

जब बीजों में औसतन आर्द्रता अंश 12-20 प्रतिशत हो जाये एवं फसल की मडाई करनी चाहिए । फसल की भडाई थ्रैसर से ही करनी चाहिए क्योंकि इससे बीज तथा भूसा अलग-अलग निगल जाते है । साथ ही साथ एक दिन में काफी मात्रा में सरसों की मडाई हो जाती है । बीज निकलने के बाद उनको साफ करके बोरों में भर लेना चाहिए ।

उपरोक्त वैज्ञानिक तकनीकों को अपनाकर यदि सरसों की खेती की जाये तो उपज में भारी बढ़ोतरी हो सकती है ।

सरसों की सस्य क्रियाए

सरसों की अच्छी फसल

सोयाबीन की कम लागत की तकनीक

एच.पी. मीणा एवं प्रद्युम्न यादव

सोयाबीन एक बहुत पुरानी फसल हैं । इसको "गोल्डन बीन" के नाम से जाना जाता है । क्योंकि इसके कई उपयोग है । प्रोटीन की उपलब्धता को देखते हुये इसका हमारे दैनिक जीवन में पौषक आहार में विशेष योगदान है । सोयाबीन का ओषधीय महत्व भी है । क्याकि सोयाबीन में उपस्थित प्रोटीन व आहरिक रेशों पाये जाने के कारण इससे रक्त में ग्लूकोज की मात्रा कम होती है जिससे खून की कमी होने से रोकता है तथा सोयाबीन में आयरन की मात्रा अधिक होने के कारण यह एनीमिया को भी नियन्त्रित करता है । सोयाबीन की पौष्टिकता को देखते हुये हमारे दैनिक जीवन में विभिन्न रूपों में प्रयोग किया जा सकता है । सोयाबीन के प्रसंस्करण से विभिन्न पदार्थ बनाये जा सकते है । जैसे सोयाबीन का आटा, सोयाबीन दूध/पेय, सोया पनीर, सोयाबीन पापड़, सोयाबीन नमकीन,सोयाबीन की बड़ी एवं अकुंरित सोयाबीन को नाश्ते के रूप में प्रयोग किये जा सकते है ।

सोयाबीन भारत में मुख्यत: मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात में उगाई जाती है । यह छोटे क्षेत्रों में हिमाचल प्रदेश, पंजाब एवं दिल्ली में भी उगाई जाती है ।

खेत की तैयारी : 2-3 साल में एक बार गर्मी में गहरी जुताई करें । उसके बाद खेत में 2-3 बार हेरो से जुताई करें । तथा बाद में बीज क्यारी बना लें ।

ऋतु : सोयाबीन गर्म एवं नमी युक्त जलवायु में उगायी जाती है । सभी प्रकार की प्रजातियों के लिए मुख्यत: तापमान 26.5 से 30 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त माना जाता है । बीज अकुंरण के लिए एवं पौध की अच्छी बढ़वार के लिए भूमि का तापमान 15.5 डिग्री सेल्सियस होना चाहिए । अगर तापमान कम रहता है तो फूल बनने में ज्यादा समय लगता है । उत्तर भारत में सोयाबीन को जून महिने के तीसरे सप्ताह से जुलाई के पहले सप्ताह तक बुआई कर सकते है ।

मृदा : अच्छे पानी की निकास वाली उर्वरतायुक्त दोमट मृदा जिसका पी.एच. मान 6.0 से 7.5 के मध्यवाली मृदा सोयाबीन के लिए उपयुक्त होती हैं । लवणीय एवं क्षारीय मृदा बीज की अंकुरणता को रोक देती है । पानी की भरावयुक्त मृदा भी नुकसान दायक होती है ।

फसलचक्र : सोयाबीन के साथ मिश्रित खेती के रूप में मक्का, मानडूआ और तिल की खेती की जा सकती है । मक्का को मिश्रित खेती के रूप में प्रयोग करते समय इस बात का ध्यान रखें की लाइन से लाइन की दूरी 100 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखें एवं मक्का की लाइन के बीच 3लाइन सोयाबीन की लगायें । उत्तर भारत में सोयाबीन को अरहर, कपास एवं चावल के साथ लगा सकते है ।देश के दक्षिण क्षेत्र में सोयाबीन को ज्वार, कपास, गन्ना अरहर एवं मुँगफली के साथ लगाने की अच्छी सम्भावना है । उत्तर भारत में

मुख्यत: सोयाबीन के बाद फसल चक्र म्नि प्रकारअपनाते है । सोयबीन-गैहूँ, सोयाबीन-आलू, सोयाबीन-चना, सोयाबीन-तम्बाकू, सोयाबीन-आलू-गैहूँ ।

बीज दर : बीज की दर प्रति हैक्टर जिसकी अंकुरण प्रतिशत कम से कम 70 प्रतिशत हों ।

उत्तरी पहाड़ी जोन : बड़े बीज - 80-90 कि.ग्रा./हैक्टर
मध्यम बीज आकार : 70-75 कि.ग्रा./हैक्टर
छोटे आकार वाले बीज : 55-60 कि.ग्रा./हैक्टर

उत्तरी प्लेन जोन : बड़े आकार वाले बीज : 80-90 कि.ग्रा./हैक्टर
मध्यम आकार वाले बीज : 70-75 कि.ग्रा./हैक्टर
छोटे आकार वाले बीज : 55-60 कि.ग्रा./हैक्टर

मध्यम जोन, दक्षिण जोन एवं पूर्वी जोन में भी बीज की मात्रा बडे आकार वाले बीज मात्रा 80-90 कि.ग्रा./हैक्टर, मध्यम आकार वाले बीज की मात्रा 70-75 कि.ग्रा./हैक्टर एवं छोटे आकार वाले बीज की मात्रा 58-60 कि.ग्रा./हेक्टर उपयुक्त है ।

बीज उपचार : कवक जन्य रोगों की रोकथाम के लिए बुआई से पहले थाईरम (75 डब्लयू पी) + कार्बेन्डाजीम (50 डब्ल्यू पी) (2 : 1) से 3 ग्राम / कि.ग्रा. बीज से उपचार करें । या ट्राइकोड्रमा विरीडी 4-5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज से उपचार करें । इसके अलावा सुक्ष्मजीवाणु ब्रोडीराइजोबियम जेपोनिकम कल्चर की लगभग 500 ग्राम / 75 कि.ग्रा. बीज + पीएसबी / पी एस एम की 500 ग्राम / 75 कि.ग्रा. बीज से उपचारित करें ।

बुआई का समय : अलग-अलग जोन में बुआई का समय भी अलग-अलग होता है । जैसे उत्तर पहाडी जोन में बुआई मई के आन्तिम सप्ताह से जून के अंत तक है । उत्तर प्लेन जोन में जून के मध्य से जुलाई के पहले सप्ताह, मध्य जोन में जून के मध्य से जूलाई के मध्य, दक्षिणी जोन में खरीफ की बुआई जून के मध्य से जुलाई के अंत तक वही रबी में अक्टूबर के पहले सप्ताह से दिसम्बर, गर्मी के लिए जनवरी का दूसरा सप्ताह एवं पूर्वी जोन के लिए जून मध्य से जूलाई मध्य तक का समय उपयुक्त रहता है ।

बुआई :बीज की बुआई लाइनों में 45 से 60 सें.मी. दूरी पर सीड ड्रील मशीन से या हल के पीछे बुआई करें । पौधे से पौधे की दूरी 4-5 सें.मी. रखनी चाहिये । उपयुक्त नमी की उपस्थिति में बीज को 3-4 से. मी. से ज्यादा गहराई पर ना बोयें । बीजदर, अंकुरण प्रतिशत, बीज के आकार एवं बुआई के समय पर निर्भर करती है ।

सिंचाई : सामान्यत: सोयाबीन फसल को खरीफ मौसम में सिचांई को कोई आवश्यकता नहीं होती हैं । जबकि, फली भरते समय अगर सुखा पड़ता है या नमी की कमी होती है तो एक

जीवन रक्षक सिंचाई उपयोगी होगी । ज्यादा बारिश के दौरान पानी की निकासी भी अति आवश्य है । जबकि स्प्रिंग फसल को लगभग 5 से 6 सिंचाई की जरूरत पड़ती है ।

खाद एवं उर्वरक : अच्छी उपज पाने के लिए सबसे पहले खेत में 15 से 20 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद का उपयोग करें । कम उर्वरता वाली मृदा में 20-30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की मात्रा प्रति हैक्टर पर्याप्त रहती है क्योंकि सोयाबीन एक दलहनी फसल है जो अपने नाईट्रोजन की ज्यादातर मात्रा अपनी जड़ो में बने हुए गाठों (नोडूलेशन) से बना लेती है । सोयाबीन की फॉस्फोरस की जरूरत अन्य फसलों से ज्यादा पड़ती है । जरूरत के हिसाब से फॉस्फोरस डालने के लिए मृदा की उर्वरता की जॉच करना चाहिए । फॉस्फोरस का उपयोग करने से जड़ो में गॉठो की संख्यां में बढ़ोतरी होती है । तथा उनमें उपास्थित जीवाणुओं की हलचल बढ़ जाती है । सोयाबीन की पोटाश की जरूरत भी अन्य फसलों से ज्यादा होती है । पोटेशियम को लेने की दर पैंध दर में बढ़ोत्तरी के समय बढ जाती है । एवं फलियॉ बनते समय घट जाती है । मृदा परीक्षण सबसे अच्छा तरीका है । पोटाश का मृदामें उपयोग करने का । मृदा परीक्षण की अनुपस्थिति में मृदा में 50-60 कि. ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से उपयोग करना चाहिए । उर्वरको का उपयोग बुआई के समय बीज से 5-7 से. मी. की दूरी पर तथा बीज से 5-7 से. मी. गहराई पर ड़ालें ।

खरपतवार नियंत्रण : बुआई के 20 से 30 दिनों के बाद गुडाई करनी चाहिए, अगर ज्यादा नमी होने के कारण गुड़ाई सम्भव ना हो तो खरपतवारनशी का छिड़काव करना चाहिए ।

किस्में : सोयाबीन की विभिन्न किस्में उपलब्ध है । उनमें से ज्यादा पैदावार वाली प्रजातियों का चयन करना चाहिए । अलग-अलग जोन के लिए अलग-अलग प्रजातियॉ उपयुक्त रहती है उनमें से कुछ प्रजातियॉ इस प्रकार है ।

1) **उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र** : बर्ग, यह प्रजातियॉ उत्तर प्लेन क्षेत्र के लिए हो, पी.के.-262, पी.के.-308, पी.के.-327, पी.के.-416, पी.एस.-564, एस्एलद्व-4, एस. एल.-96, वी.एल.एस.-21, पूसा-16, पूसा-22, पूसा-24, पूसा-27, पूसा-37, पी.एस.-1024, पी.एस.-1042, पी.एस.-1072, एवं पी.एस.-1241 ।
2) **उत्तर प्लेन क्षेत्र** : वर्ग, अलनकार, अंकूर, शीलाजीत, पी.के.-262, पी.के.-308, पी.के.-416, पी.एस.-564, एस.एल.-4, एस.एल.-96, वी.एल.एस.-21, पूसा-16, पूसा-22, पूसा-24, पूसा-27, पूसा-37, पी.एस.-1024, पी.एस.-1042, पी.एस.-1072, एवंपी.एस.-1241 ।
3) **मध्य क्षेत्र :** बर्ग, क्लार्क-63, मोनेटा, दूर्गा, गोरव, गुजरात सोया-1 एवं 2, एम.ए.सी.एस.-13, एम.ए.सी.एस.-58, टी.-49, पूसा-37, पी.के.-472, जे.एस.75-46, जे.एस.-76-205, जे. एस.-7105, जे. एस.-79-81, कालीतुर, जे.एस.-80-21, जे.एस.-335, जे.एस.-90-41, अहील्या-1, अहील्या-2, अहील्या-3, अहील्या-4, इन्दीरा सोया-9,

एम.ए.यू.एस.-32, एम.ए.यू.एस.-47, एम.ए.यू.एस.-81, जे.एस.-93-05, जे.एस.95-60 ।

4) **दक्षिण क्षेत्र :** को-1, को-2, डेविश, हार्डी, इम्परूड पेलीकन, के.एच.एस.बी.-2, मोनेटा, पी.के.-471, पी.एस. - 1029, पूसा-37, पूसा-40, एम.ए.सी.एस.-57, एम.ए.सी.एस.-124,ए.डी.टी.-1, के.बी.-79, के.एम.-1, एम.ए.यू.एस.-1,एम.ए.यू.एस.-2 (पूजा), एम.ए.सी.एस.-450 ।
5) पूर्वी क्षेत्र : जे.एस.-80-21, पी.के.-472, अंकूर, बीरसा सोया-1, बर्ग, पी.के.-262, पी.के.-327, पूसा-16, पूसा-22, पूसा-24, आर.ए.यू.एस.-5 ।

कीट प्रबंध :

पत्ती लपेटक कीट : पत्ती लपेटक कीट सफेद हरे रंग का होता है जो पत्ती के अंदर लिपटा रहता है । और पत्ती के पर्णहरित को खा जाता है । जिससे पत्तियॉ पूरी तरह सुख जाती है । यह कीट 9.3 प्रतिशत पैदावार की कमी करता है । कीट की लारवा पत्तीयों को लपेटकर उनको नुकसान पहूचॉती है । यह पत्तियों को ऊपर की तरफ से नीचे लपेटती है या बीच की तरफ लपेटती है । यह कीट जूलाई के दूसरे सप्ताह से सितम्बर के अन्तिम सप्ताह तक सक्रिय रहता है ।

सोयाबीन तना मक्खी :

यह एक बहुत ही गम्भीर कीट है जो 15-41 प्रतिशत पैदावार का नुकसान करता है । इसका प्रकोप बुआई के 15-20 दिनों के बाद शुरू होता है । प्रभावित पौधे जहॉ आक्रमण होता है उस जगह के ऊपर से सुख जाते है । जैसे ही सोयाबीन बीज-पत्र लेडन्स बाहर आते है । छोटी-छोटी मखियॉ बीज-पत्रों के ऊपर अण्डें दे देती है । मेगट के प्रकोप होने के कारण यूवा पैधे सुख जाते है एवं सब मर जाते है ।

बीन बीटल :

यह एक गोण महत्व वाला कीट है जो फसल को जूलाई के पहले सप्ताह से नुकसान पहुँचाना शुरु करता है जो अगस्त के अन्तिम सप्ताह तक चलता है । उसकी सूँडी एवं प्रोढ़ दोनो पौधे के बढ़वार वाले हिस्सों को खाते है जिससे पत्तियों का पर्णहरित वाला हिस्सा कम हो जाता है ।

माहू (एफिड) :

यह भी सोयाबीन की फसल को नुकसान पहूचॉता है ।माहूँ की संख्या जूलाई माह के दुसरें सप्ताह से अगस्त महिने के दुसरे सप्ताह तक बढती है । अन्य कीट जैसे बालो वाली सूड़ी, और तम्बाकू कटवर्म भी सोयाबीन को नुकसान पहुचाते है ।

सोयाबीन के मुख्य कीटो का प्रबंध :

1) **कृषि क्रियाये** : मक्का एवं धान के साथ सोयाबीन की अन्तरफसल प्रणाली, कीट जैसे पत्ती लपेटक एवं तना मक्खी को रोकने में सहायक होती है और प्रकृति में उपस्थित सोयाबीन के कीटो के दुश्मनों को बढ़ाती है ।

2) **जैव-नियंत्रण** : प्रकृतिक शत्रु जैसे कोसीनेलिडस और मकडियॉ सोयाबीन की फसल पर पाये जाते है । जो मुलायम शरीर वाले कीटो को खा जाते है । इसके अलावा कोसीनेलिडस परभक्षी जैसे कोसीनेला सेपटूमपूनकटटा को ट्रान्सवरसेलिस@2-3 प्रति पौधे रहने से माहूँ की संख्या को नियन्त्रित या घटाती है ।

3) **रासायनिक नियंत्रण** : पत्ती लपेटक एवं तना मक्खी को नियंत्रित करने के लिए सोयाबीन के बीज को बुआई से पूर्व इमीडाक्लोरपिड की 7 मिली./कि.ग्रा.बीज से बीजोपचार करना चाहिए इसके बाद फीपरोनील की 0.4 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से दो बार छिड़काव करें । तदोपरांत 15 दिनों के अन्तराल से छिडकाव करे । इसके अलावा तना मक्खी को नियंत्रित करने के लिए कार्बोफूरान 1 कि.गा./हैक्टर की दर से छोटी मात्रा में 0.5 कि.ग्रा./हैक्टर प्रत्येक, एक बुआई के समय और अन्य बुवाई के 45 दिनों के बाद प्रयोग करें ।

रोग प्रबंध :

1) **अल्टरनेरिया अगंमरी** : यह रोग वर्षा के दिनों में कवक के कारण होता है । इससे पत्तियों पर काले धब्बे बन जाते है । रोग के प्रकोप वाली पत्तियॉ सुख जाती है और बाद में पकने से पहले ही गिर जाती है । इसकी रोकथाम के लिए अच्छे बीजो या प्रमाणित बीजो को लगायें । रोग रोधी प्रजातियों को लगायें । फसल के अवशेषों को निकालकर नष्ट कर दें । थाईरम + कार्बेन्डाजिम (2:1) 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजों को उपचारित कर बुआई करे ।

2) **चारकाल रोट** : यह एक बहुत ही हानिकारक रोग है । यह रोग मुख्यता उस समय दिखता है जब नमी की कमी हो अथवा सूत्रकृमियों का प्रकोप होने पर और इसका अन्य कारण पोषक तत्वों की कमी से हो सकता है । इसका प्रकोप निचली पत्तियों पर सुखे या उकट्ठा के रूप में प्रकट होता है । तने का कालापन एवं फटना इस रोग का मुख्य लक्षण है । इसकी रोकथाम के लिए गर्मी में गहरी जुताई करें । रोग प्रतिरोधी प्रजातियों के उगायें । प्रमाणित बीज को ही बोना चाहिए। धान्य फसलों के साथ फसल चक्र में बोयें । खेत में पानी निकास की सुविधा हो । फसल के पिछले साल के बचे हुए अवशेषो को नष्ट करें ।बीज आचार भी काफी उपयोगी सिद्ध होता है । इसके लिए थाईरम + कार्बेन्डाजिम (2:1) 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें । इसके अलावा 5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से ट्राइकोड्रमा हारजेनम अथा ट्राईकोड्रमा विरीडी से बीजापचार करें ।

3) **कॉलर रोट** : इसका प्रकोप भूमि की सतह से छोडा नीचे होता है । अचानक पौधों का पीलापन या सूखना इस रोग का पहला लक्षण है । पत्तियॉ भूरे रंग में बदल जाती है । तना सुख जाता है तथा पौधे की मृत्यु हो जाती है । इसकी रोकथाम के लिए

गर्मीयों में भूमि की गहरी जुताई करें । हो सके तो रोग प्रत्तिरोधी प्रजातियों को ही लगावें । मक्का या ज्वार के साथ फसल चक्र अपनायें ।

4) **चूर्णित आसिता** : इस रोग से पौधे के पत्तियों तने और फलियों पर सफेद रंग का पाउड़री दिखाई देने लगता है । इस रोग की प्रकोप अवस्था में भूमि के ऊपर वाले सभी भागों पर सफेद पाउडर से ड़क जाता है । इस रोग की रोकथाम के लिए गर्मीयों में गहरी जुताई करें । रोग प्रतिरोधी प्रजातियों को लगावें । पौधें के बचे हुए अवशेषों का हटावें । रोग दिखने पर केराथीन (0.08 प्रतिशत) अथवा कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करें ।
5) **रतुआ रोग** : रोग की शुरुआत पत्तियों पर पानी के ध्ब्बे जैसे प्रकट होता है बाद में यह धब्बे आकार में बढ़ते रहते है । यह घब्बे ग्रे रंग से भूरे रंग में बदल जाते है । यह ध्ब्बे फलियों एवं तनो पर भी दिखाई देते है । रोग की ज्यादा प्रकोप वाली अवस्था में पौधे के रोग ग्रसित भाग मर जाते है । इसकी रोकधाम के लिए गर्मी में गहरी जुताई करें । रबी में सोयाबीन की खेती ना करें । रोग प्रतिरोधी प्रजातियों जैसे अकूंर, जे. एस.80-21, पी.के.-1024, एवं पी.के. 1029 को लगावें । 1 मिली./लीटर की दर से हेक्जाकोनाजोल अथवा परोपोकोनाजोल का छिड़काव करें । इसके अलावा मैन्कोजेब का 3 ग्राम / लीटर की दर से उपयोग करें ।

कटाई :

पकने की अवधि मुख्यत: 50 से 140 दिनों की होती है जो प्रजातियों पर निर्भर करती है । जब सोयाबीन की पत्तियॉ पीले रंग की हो जाये और गिरने लगे तथा फलियॉ सुखने लगे तो समझना चाहिए की सोयाबीन कटाई के लिए तैयार है । कटाई के समय बीजो में नमी की मात्रा लगाभग 15 प्रतिशत होनी चाहिए । कटाई का कार्य हसिया की सहायता से हाथ द्वारा किया जाता है । गहाई का कार्य सोयाबीन की थ्रेसर से किया जा सकता है या फिर हाथ की सहायता से सावधानी पूर्वक डण्डे द्वारा कर सकते है । जब फलियॉ काले, भूरे या सूनहरे रंग में बदलने लगे तब बीजो में 17 प्रतिशत नमी होती है । थ्रेसर का उपयोग गहाई के लिए तब करे जब दानों में नमी की मात्रा 14 प्रतिशत हों ।

सोयाबीन के लिए कम लागत वाली तकनीक :

1) **प्रजातियों का चयन** : सोयाबीन की उन प्रजातियों का चयन करें, जो ज्यादा पैदावार देने वाली हो तथा जो विभिन्न प्रकार के मौसम में समान रूप से स्थिर परफोरम करें । जिस प्रजाति का चयन करें वह प्रजाति कीट एवं रोगों के प्रति कीट एवं रोग प्रतिरोधी होनी चाहिए । आज सभी राज्यों के लिए जिनमें सोयाबीन लगाते है के लिए अलग-अलग प्रजातियॉ उपलब्ध है 1 एक प्रजाति को लगाने से अच्छा है कि आप 3-4 प्रजातियों को एक साथ लगायें ।
2) **खेत से पैदा किये गये बीज की गुणवत्ता बढ़ाना या सुधार करना :** जैसा की आप जानते है की सोयाबीन का बीज महंगा होता है इसलिए किसानों को अपना स्वयं का बीज तैयार करना चाहिए । उनको बीज की आनुवंशिक एवं भौतिक शुद्वता पर ध्यान

देना चाहिए । अवांछनीय पौधें को तुरन्त निकाल देना चाहिए । उच्च गुणवत्ता वाला बीज उत्पादन के लिए मुख्य बात है कि उसमें किसी अन्य प्रजाति का बीज नही मिला होना चाहिए । इसके लिए कटाई एवं गहाई के समय विशेष ध्यान रखें बीज में कम से कम 70 प्रतिशत अकुंरण की क्षमता होनी चाहिए ।

3) **समय पर बुआई** : बुआई का समय मुख्यत: सोयाबीन की बढ़वार एवं पैदावार पर भूरा असर डालता है अत: सही समय पर बुआई करें । अगर सही समय पर बुआई नहीं करे तो 17-39 प्रतिशत तक पैदावार में गिरावट आ जाती है । इन्दौर में वैज्ञानिकों ने यह पता किया है कि अगर ज्यादा उत्पादन लेना है तो बुआई का सही समय 20 जून है । बुआई में देरी करने से पैदावार में गिरावट होती है । सोयाबीन की पैदावार में 181.77 कि.ग्रा. / हैक्टर की कमी देखी गई है जब प्रत्येक 5 दिन बाद बुआई करते है । अत: सही समय 25 जून माना गया है । अत: सोयाबीन से अधिक पैदावार लेने के लिए सही समय पर बुआई करना अति महत्वपूर्ण है ।

4) **उचित बीज दर** : ज्यादा बीज से बिना पैदावार बढाये किसान की लागत बढ़ा देता है । अत: उचित बीज दर का उपयोग करें । यह छोटे आकार के बीज वाली प्रजातियों के लिए 75 कि.ग्रा./हैक्टर तथा देर से बुआई और बड़े आकार के बीज वाली प्रजातियों के लिए 100 कि.ग्रा. / हैक्टर उपयुक्त है ।

5) **उचित दूरी और पौधों की संख्या** :उचित पैदावार पाने के लिए उचित दूरी एवं पौधों की संख्याँ बहुत जरूरी है । सामान्यत: दक्षिणी क्षेत्र एवं मध्य क्षेत्र में लाइनों की दूरी 30-45 से.मी. रखते है जबकि उत्तरी क्षेत्र में यह दूरी 45-60 से.मी. रखते है । क्योंकि उत्तरी क्षेत्र में पौधों की बढवार ज्यादा होती है अत: लाइनों के बीच दूरी भी ज्यादा रखते हैं । मोरेना में अधिक पैदावार 30 से.मी. दूरी पे मिली है । बासवाड़ा जिले में भी 30 से.मी. की दूरी पर ज्यादा पैदावार दर्ज की है । वैज्ञानिकों ने पाया की 30 से.मी. की दूरी पर बुआई करने से 30 से 35 प्रतिशत सोयाबीन की पैदावार में बढोत्तरी की जा सकती है । उचित पैध संख्यॉ, उत्तरी, मध्य एवं दक्षीणी क्षेत्रों के लिए क्रमश: 0.3, 0.45 और 0.6 मिलियम पौधे / हैक्टर होने चाहिए ।

6) **बीज उपचार** : सोयाबीन की पैदावार बढ़ाने के लिए बीजो को बुआई से पूर्व कवकनाशीयों और कीटनाशीयों से बीजोपचार करना चाहिए। बीजोपचार करने से प्रभावित बीजो के अंकरण में सहायता मिलती है । जिसमें मृदा से पैदा होने वाले जीवाणुओं से फसल की सुरक्षा करता है । बुआई से पूर्व बीजो को थाईरम + कार्वेन्डाजिम (2:1) 3 ग्रा.म. / कि.ग्रा. बीज की दर से या अकेले थाईरम की 3-4 ग्राम/ कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए । इसके अलावा इमीडाकलोपरीड 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से भी उपचारित कर सकते है ।

7) **अन्तशस्य क्रियाये** : बुआई के 25-30 दिनों के एक बाद एक बार अन्तर शस्य क्रियाये डोरा की सहायता से करना चाहिए । इसका उपयोग सस्ता एवं अच्छा है ।

8) **जैविक उर्वरको का उपयोग** : सोयाबीन की ज्यादा पैदावार लेने में जैविक उर्वरको का काफी महत्व है । सोयाबीन की बढ़वार एवं पैदावार बढाने के लिए मुख्यता ब्रेडीराइजोबियम स्पेसिज का बहुतायत से प्रयोग किया जाता है । 5 ग्राम / कि.ग्रा. बीज की दर राइजोबियम कल्चर से बीजो को उपचारित करें । फॉस्फोरस घोलने वाले जीवाणु (PSB) का भी 5 ग्राम/कि.ग्रा.बीज की दर से उपयोग कर सकते है जो फॉस्फोरस की उपलब्धता को बढ़ा देते है ।

9) **कार्बनिक खाद / अवशेषों का उपयोग** : मृदा में 5-10 टन/हैक्टर गोबर की खाद, 5–10 टन/हैक्टर कम्पोस्ट और 2-5 टन/हेक्टर फॉस्फोकम्पोस्ट का प्रयोग करना चाहिए । बुवाई के 4-6 सप्ताह पहले फसल के अवशेषों को 5टन/हैक्टर की दर से उपयोग कर सकते है । मृदा की भैतिक एवं जैविक गुणता को बढ़ाने या सुधारने में कार्बनिक/फसल अवशेषों का महत्वपूर्ण योगदान है जो मृदा की उर्वरक उपयोग क्षमताका बढ़ाता है ।

10) **कीट प्रबंध** : जल्दी बुआई करने से सोयाबीन की फसल पर कीटो का अधिक प्रकोप होता है ।अत: सही समय पर बुआई करें । सोयाबीन में पौध संख्या का कीटो की रोकथाम में काफी महत्व है अत: प्रति हैक्टर पौधों की संख्याँ उपयुक्त होनी चाहिए । ज्यादा पौध संख्याँ ज्यादा कीट नुकसान को बढावा देती है । फसल की कटाई के बाद बचे फसल के अवशेषों को जला देना चाहिए ताकि उनमें उपस्थित कीट मर जायें ।कीटो की संख्या को कम करने के लिए 2-3 वर्ष में एक बार गहरी जुताई करनी चाहिए ।

11) **रोग प्रबंध**: ज्यादा पैधों की संख्या पर्णीय रोगों को बढावा देता है । ज्यादा पौध दर और पौधों की सघनता, चारकोल रोट, सेपटोरिया पत्ती धब्बे, स्कलेरटोनिया तना गलन, स्कलेरटोनिया ब्लाइट और अन्य वाइरस जनित रोगो को बढ़ावा देती है । अत: पौधों की संख्या को बीजकी गुणवत्ता, मृदा उर्वरता एवं मृदा में नमी के आधार पर व्यवस्थित करें । मृदा जनित रोगों की नियंत्रित करने में । नमी प्रबंध का मुख्य योगदान होता है । सिचांई प्रबंध के द्वारा, चारकोल रोट, कोलर रोट, स्क्लेरोटीनिया स्टेम रोट, एन्थ्रेक्नोज,बेक्टेरियल ब्लाईट, पोड और स्टेम ब्लाइट और सेपटोरिया ब्राउन स्पोट जैसे रोगो को रोका जा सकता हैं 1 फसल चक्र भी रोगो की रोकथाम में महत्वपूर्ण होता है । कम से कम दो वर्ष का फसल चक्र अपना फायदेमंद रहता है । रोग प्रतिरोधी प्रजातियों को ही लगाना चाहिए ।

12) **समय पर कटाई** : सोयाबीन में फॅली चिटकने की समस्या रहती है । अत: सही समय पर फसल की कटाई करनी चाहिए । क्योंकि फली चिटकने से उत्पादन पर भूरा असर पड़ता है । इस परेशानी से राहत पाने के लिए सोयाबीन की कटाई उस समय करनी चाहिए जब फलिया अपना हरा रंग खोने लगें । इसके अलावा चिटकने अवरोधी प्रजातियों का चयन करें ।

13) **उचित गहाई** : सोयाबीन को डण्ड़ों से गहाई नहीं करना चाहिए क्योंकि इसके दाने फूट जाते हैं । कटाई के बाद 2-3 दिनों तक धूप में सुखने के लिए छोड़ देना चाहिए । जब नमी की मात्रा 13-14 प्रतिशत के करीब हो कम पावर वाली (300-400 r.p.m.) वाली थ्रेसर से गहाई करें ।

सरणी-1 : अलग-अलग राज्यों के लिए सोयाबीन की उन्न्त प्रजातियॉ

क्र.सं.	राज्य	प्रजातियॉ
1.	मध्य प्रदेश	जे.एस.-60, जे.एस.98-05, एन.आर.सी.-2, एन.आर.सी-7, एन आर सी - 12, एन आर सी -37, जे एस-335, जे एस-71-05, जे.एस.-80-21, जे.एस.-90-41, इन्दिरा सोया-9, एम.ए.यू.एस.-47, एम.ए.यू.एस.-81, एम.ए.यू.एस.-61-2
2.	राजस्थान	एन.आश्र;सी.-37, जे.एस.-335, जे.एस.-80-21, उम.उ.सू.उा.-+47, जे.एस.-9305, एम.ए.यू.एस.-81, एम.ए.यू.एस.-61-2
3.	महाराष्ट्र	एम.ए.सी.एस.-57, एम.ए.सी.एस.-124, एम.ए.सी.एस.-450, पी.के.-1029, एन.आर.सी.-37, एम.ए.यू.एस.-47, जे.एस.-335, जे.एस.-9305, एम.ए.यू.एस.-81, एम.ए.यू.एस.-61-2
4.	उत्तर प्रदेश	पी.के.–564, पी.के.-1042, पी.के.-1024, वी एल सोया-21, वी.एल.एस.-47, हीमसो-1563
5.	कर्नाटक	एन.आर.सी.-77, एम.ए.सी.एस.-124, एम.ए.यू.एस.-2, एम.ए.सी.एस.-450, पी.के.-1029, हर्डि, एम.ए.यू.एस.-61
6.	आन्ध्र प्रदेश	एन.आर.सी.-7, एम.ए.सी.एस.१२४, एम.ए.सी.एस.-४५०, एम.ए.यू.एस.-2, पी.के.-1029, हार्डी, एम.ए.यू.एस.-61
7.	पंजाब	पी.के.-564, पी.के.-1042, पी.के.-1024, एस.एल.-295
8.	हिमाचल प्रदेश	पी.एल.सोयो-21, पी.एल.एस.-47, हीमसो-1563
9.	तमील नाडू	एन.आर.सी.-7, एम.ए.सी.एम.-124, एम.ए.यू.एस.-2, एम.ए.सी.एस.-450, पी.के.-1029, एम.ए.यू.एस.-61

सारणी-2 : सोयाबीन के मुख्य रागों के प्रति रोगरोधी प्रजातियॉ

रोग	रोग प्रतिरोधी प्रजातियॉ
पत्तो की धब्बेदार बीमारी	एम.ए.सी.एस.-124, के.एच.एस.वी.-2, एन.आर.सी.-2, पी.के.-916, पी.के.-472, पी.के.-1029, पी.के.-1042
चारकोल रोट	जे.एस.-335, एल.एस.वी.-1, एन.आर.सी.-37, पी.के.-1042, पी.एल.एस.-2
रतुआ	इन्दिरा सोया-3, जे.एस.-80-21, पी.के.-1024, पी.के.-1029
सोयाबीन मौजेक	जे.एस.-335, जे.एस.-71-05, जे.एस.-80-21, एम.ए.सी.एस.-58,

	एम.ए.सी.एस.–124, पी.के.-472, पी.के.-416, पी.के.-564, पी.के.-1024, पी.के.-1029, पी.एल.एल.-1, वी.एल.एस.-2
पीला मौजेक	जे.एस.-335, जे.एस.-71-05, एम.्ए.सी.एस.-59, एम.ए.सी.एस.-124, एन.आर.सी.-2, एन.आर.सी.-12, पी.के.-416, पी.के.-472, पी.के.-564, पी.के.-1024, पी.के.-1029, पी.एल.एस.-2

सरणी-3 : सोयाबीनकी उत्तन किस्में

किस्में	पैदावार (कु./हैक्टर)	उपयुक्त क्षेत्र
पी.के.-1029	25-30	दक्षिण क्षेत्र के लिए उपयुक्त/90 से 95 दिन में पकती है ।
पी.के.1092	30-35	उत्तर प्रदेश के सभी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त । 118 से 125 दिन में पकती है ।
हरित सोया	20-25	उत्तर पहाडी क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 108 से 130 दिन में पकती है ।
एस.-93-05	20-25	मध्य प्रदेश, उत्तर पश्चिमी महाराष्ट्र, राजस्थान, बुन्देलखण्ड व उत्तर प्रदेश के लिए उपयुक्त । 90 से 95 दिन में पकती है।
एस.-335	25-30	मध्य पूर्व व दक्षिण क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 95 से 100 दिन में पकती हैं ।
पी.के.-1042	30-35	उत्तर भारतीय क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 110 से 119 दिन में पकती हैं ।
वी.एल.एस.-47	25-30	उत्तर पहाड़ी क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 122 से 175 दिन में पकती हैं ।
एन.आर.सी.-37	35-40	मध्य क्षेत्र न महाराष्ट्र के लिए उपयुक्त । 96 से 101 दिन में पकती हैं ।
एम.ए.यू.एस.-2	25-30	दक्षिण क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 105 से 110 दिन में पकती हैं ।
पी.के.-1024	25-30	उत्तर क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 115 से 118 दिन में पकती हैं ।
पूसा-9712	20	दिल्ली के लिए उपयुक्त
इन्दिरा सोया-9	25-30	मध्य प्रदेश व छत्तीसगढ क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 106 दिन में पकती है ।
पूसा - 9814	22.5	उत्तर क्षेत्र में सिंचित अवस्था के लिए उपयुक्त ।

सोयाबीन में सस्य क्रियाऐं

सोयाबीन की एफएलडी क्षेत्र

सूरजमुखी की कम लागत की तकनीक

एच.पी.मीणा, प्रद्युम्न यादव, अजिज कुरेशी एवं सतीश कुमार

सूरजमुखी एक महत्वपूर्ण तिलहनी फसल है । इसका तेल दिल के मरीजों के लिए अच्छा माना जाता है । यह एक ऐसी फसल है जो साल भर उगायी जा सकती है । उत्तर भारत में इसे बसन्त ॠतु में फरवरी से जून के मध्य उगाया जाता है । इसके बीजों में 40-50 प्रतिशत तेल पाया जाता है । इसके तेल में कोलेस्ट्राल नहीं होता है । इसका तना जलाने के काम आता है । इसकी खली पशुओं एवं मुर्गियों का अच्छा भोजन है ।

मृदा :

सूरजमुखी की खेती सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है । किन्तु उचित जल निकास व उदासीन अभिक्रिया वाली (पी.एच.6.5-8.0) दोमट से भारी मृदाए अच्छी समझी जाती हैं । मृदा की जलधारण क्षमता एवं कार्बनिक पदार्थ की मात्रा अच्छी होनी चाहिए । सामान्यत: खरीफ में असिंचित एवं रबी-जायद में इसे सिंचित क्षेत्रों में उगाया जाता है ।

प्रजातियॉ :

सूरजमुखी की संकर एवं सामान्य प्रजातियॉ आजकल बाजार में उपलब्ध हैं । किन्तु उपज क्षमता एवं तेल की मात्रा में काफी भिन्नता पायी जाती है । अत: अधिक उत्पादन एवं तेल की मात्रा वाली प्रजातियॉ सारणी-1 एवं 2 में दी गयी है ।

बीज एवं बीज शोधन :

5-6 कि.ग्रा. संकर एवं 7-8 कि.ग्रा. सामानय प्रजातियों की बीज प्रति हैक्टर प्रयोग करते है । बुआई से पहले बीज को 12 धण्टे पानी में भिगोकर छाया में 3-4 घंटे रखे इसके तुरन्त बाद ब्रॉसीकोल / केप्टान की 2 ग्राम मात्रा या थीरम की 3 ग्राम मात्रा लेकर प्रति कि.ग्रा. की दर से शोधित कर लेना चाहिए । 2 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल में बीज को 12 घण्टे भिगोकर छाया में सुखाकर लगाने से जमान अच्छा होता है तथा सूखे को सहन की क्षमता भी बढ़ जाती हैं । तथा पौधों को विभिन्न बीमारियों से बचाया जा सकता है ।

बुआई विधि एवं समय :

सूरजमुखी की बंसतकालीन फसल को बोने का उचित समय फरवरी का प्रथम से द्वितीय पखवाड़ा है । किन्तु इसकी बुवाई मार्च के प्रथम से द्वितीय पखवाड़े तक की जा सकती है । देर से बुवाई करने पर फसल देर से पकती है और मानसून की बारिश शुरू हो जाती है जिससे फसल कटाने एवं मड़ाई में समस्या हो सकती है । इसीलिए फसल को फरवरी के अंत तक अवश्य बो देना चाहिए ।

बुआई सदैव लाइनों में करें समान्य एवं बौनी प्रजातियों को 45 से.मी. तथा संकर और लंबी प्रजातियों को 60 से.मी. दूरी पर बनी लाईनों में बोयें। पौधे से पौधे की दूरी 20-30

से.मी. रखें । बीज की गहराई 3-4से.मी. रखें । बुआई के 15-20 दिन बाद विरलीकरण कर पौधे से पौधे की दूरी 20-30 से.मी. कर देनी चाहिए ।

उर्वरक तथा खाद :

सूरपजमुखी की सफल खेती करने के लिए 80-120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है । नाईट्रोजन की आधी मात्रा बोते समय तथा शेष बची हुई मात्रा को दो बराबर भागों में बॉटकर एक भाग 20-25 दिन बाद तथा दूसरा भाग 35-40 दिन बाद या पहली एवं दूसरी सिंचाई के बाद खड़ी फसल में छिड़क दें । फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय दें । 200 कि.ग्रा. / हेक्टर जिप्सम का भी प्रयोग बुआई के समय अवश्य करें अथवा फॉस्फोरस को सिगंल सुपर फॉस्फेट के रूप में दें जिससे पौधें को सल्फर तत्व की उपलब्धता बढ़ जाती है और दानों की चमक बढ़ जाती है । सल्फर तेल की मात्रा भी बढ़ाता है । उर्वरकों की मात्रा प्रति एकड़ एवं प्रति हैक्टर सारणी-3 में दी गयी है ।

सिंचाई :

आवश्यकतानुसार पहली सिंचाई बोने के 20-25 दिन बाद आवश्यक है । उसके बाद सामान्यत: 15-20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है । वैसे 4-5 सिंचाइयॉ वानस्पतिक, कली, फूल एवं दाने पड़ते समय खेत में नमी की कमी होने पर करनी आवश्यक है ।

खरपतवारों का नियंत्रण :

इसके लिए पहली निराई - गुड़ाई बोने के 15-20 दिन बाद करें तथा दूसरी गुडाई 30-35 दिन बाद करें और दूसरी गुड़ाई के समय पौधें पर मिट्टी भी चढ़ा दें, जिससे पौधे तेज हवा के कारण गिर नहीं पाते । पेन्डीमेथलीन की 1 कि.ग्रा. एक्टिव मात्रा 600-800 लीटर पानी में घोलकर छिडकाव बुआई के 2-3 दिन बाद करने से भी खरपतवार नष्ट हो जाते है ।

पादप सुरक्षा

कीट नियंत्रण :

कटुआ सूंडी : यह सूंडी रात के समय मृदा की निचली सतह से ऊपर आकर नये अकुंरित पौधों को जमीन से काट देती है और कभी-कभी प्रथम सिंचाई तक पौधों को नुकसान करती है । इसकी रोकथाम के लिए क्लोरपायरीफॉस (20 ई.सी.) की 20 लीटर मात्रा को 500-700 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें या सिंचाई के साथ दें । 200 मि.ली. फेनवेलरेट (20 ई.सी.) या 50 मि.ली. सायपरमैंथ्रीन या 375 मि.ली. डेकामैथ्रीन (20 ई. सी.) को 250-350 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें ।

बालों वाली सूंडी :

इस सूंडी का प्रकोप बहुत अधिक होता है । यह झूँडं में दिखाई देती है और अधिकतर तने एवं पतियों का हरा भाग खाती है । जिससे पत्तियॉ जालों के रूप में दिखाई देने लगती हैं । इसकी रोकथाम के लिए 500 मि.ली. एण्ड़ोसल्फान (35 ई.सी.) या 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस (35 ई.सी.) या 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस (36 ई.सी.) या 200 मि.ली. डाइक्लोरोवॉस (76 ई.सी.) को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें ।

हरी सूंडी (हैलियोथिस) :

यह सूंडी फूल को सर्वाधिक नुकसान करती है । ये सूडियॉ हल्की पीली एवं काले रंग की भी हो सकती है और फूल में घुसकर फूल व बीज खा जाती है । इसकी रोकथाम के लिए 500 मि.ली. एण्ड़ोसल्फॉन (35 ई.सी.) या 600 मि.ली. क्विनॉलफॉस (25 ई.सी.) या 250 मि.ली. फोने पेकरेट को 500-700 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें । कीटनाशी की छिड़काव तभी करें जब खेत में प्रति पौधा सूंडी दिखाई देती है ।

मिलीबग :

इस कीट का प्रकोप पिछले वर्षो से दिखाई देने लगा है । यह सफेद रंग का कीट होता है और झुंड में पौधों के सभी भागों पर चिपका हुआ रहता है । यह पौधों का रस चूसता है । जिससे बढ़वार रुक जाती है । इसकी रोकथाम के लिए 200 मि.ली. मेथोमाइल या 200 मि.ली. डाइक्लोरावॉस (76 ई.सी.) या 300 मि.ली. डाइमेथोएट या 250 मि.ली. इमीडाक्लोप्रिड की मात्रा 500-600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें ।

रोग नियंत्रण :

पत्तों की धब्बेदार बीमारी (अल्टरेनेरिया हेलीएन्थी) :

पौधो के पत्तों पर गोल भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं और बाद में ये ध् ब्बे छल्ले के आकार के हो जाते है । तथा रंग काला पड़ जाता है । अधिक प्रकोप होने पर तनों व फूलों को भारी नुकसान होता है । इसकी रोकथाम के लिए 0.2 प्रतिशत (2 मि.ली./लीटर पानी) से बीज शोधन करें तथा खड़ी फसल में क्विंटल की 1 लीटर मात्रा को 500-600 लीटर पानी में घोलकर खड़ी फसल में प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें या 0.2 प्रतिशत क्विटंल से बीज शोधन करें तथा खड़ी फसल में प्रोपीकोनेजोल की 500 मि.ली. दवा को 500-600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

ऊत्तकक्षय रोग (नेक्रोसिस) :

इस बीमारी में पौधा सूख जाता है । इसकी रोकथाम के लिए इमीडाकलोरोप्रिड की 5 ग्राम दवा से प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधन करें । इसके बाद इसी दवा की 250-300 ग्राम दवा को 500-600 लीटर पानी में घोलकर बोने के 4-5 दिन बाद छिडकाव करें ।

रतुआ या रस्ट :

पत्तियों की निचली सतह पर छोटे, गोल एवं लाल रंग के धब्बे बनते है । मुख्यत: यह बीमारी खरीफ एवं कभी-कभी जायद की फसल में लगती है । इसकी रोकथाम के लिए मैंकोजेब या जिनेब की 1.0 से 2.5 कि.ग्रा. मात्रा या ट्राइडीफार्फ 500 ग्राम मात्रा को 500-600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव 15-20 दिन के अन्तर पर दो-तीन छिडकाव करें ।

तुलासिता रोग (डाउनी मिल्ड्यू) :

पत्तियों की निचली सतह पर ध्ब्बे बनते हैं फिर सफेद फंगस की बढ़वार होती है बाद में पत्तियों, तना एवं फूल पर फैल जाती हैं जिससे पौधों की बढ़वार रूक जाती हैं । इसकी रोकमिल के लिए एप्रोन की 6 ग्रामदवा प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज शोधन करें तथा खड़ी फसल में मेटाकजिल या मैंकोजेब की 2.0 कि.ग्रा. दवा को 500-600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिडकाव करें या रेडायिल एम-जेड की 2 ग्राम/लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें ।

उकठा रोग (स्कलेरोशियम विल्ट) :

इसमें पौधें सूख जाते है । यह रोग पौधे की किसी भी अवस्था में देखा जा सकता है। उसकी रोकथाम के लिए केप्टान की 2.5-3.0 ग्राम दवा से प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज शोधन करें । ट्राइकोडर्मा को मृदा में मिलायें, 3-4 साल का फसल चक्र अपनायें । फसल को पानी भराव की स्थिति या अधिक सूखे से बचायें । केप्टान 12 ग्राम एवं ट्राइकोडर्मा (5-10 ग्राम) के मिश्रण से प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज शोधन करने से अधिक लाभ होगा ।

चारकोल सड़न :

इसमें तना मृदा सतह के पास काला पड़ जाता है और बाद में पूरा पैधा सूख जाता हैं । इससे बचाव के लिए 3-4 साल के फसल चक्र को अपनाने के साथ ही गर्मी में गहरी जुताई करें । बीज का शोधन थाईरम / केप्टान से अवश्य करें । फसल को सूखे से बचायें ।

मुण्डक सड़न (राइजोपस शीर्ष सड़न) :

इसमें मुण्डक या फूल सड़ने लगते है जिससे बीज नहीं बनते या फिर बीज भी सड़ जाते हैं । इसकी रोकथाम के लिए मैंकोजेब की 1.0 से 1.5 कि.ग्रा. मात्रा को 500-600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से पहला 50 प्रतिशत फूल आते समय तथा दूसरा फूल में दाना भरते समय छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 0.2 प्रतिशत ब्लाइटोंक्स के दो छिडकाव 20-25 दिन के अन्तर पर किये जा सकते हैं ।

पशु-पक्षियों से बचाव :

सूरजमुखी की फसल को मुख्यत: नीलगाय, जंगली सुअर, बंदर, तोता, कौआ आदि मुण्डक में दाना भरते समय भारी नुकसान करते हैं । तोते अकेले पूरी फसल को चौपट करने

में सक्षम होते हैं । अत: इन पशु-पक्षियों से फसल को बचाना अति आवश्यक है । आज कल बाजार में पक्षी उड़ाने वाले टेप (एल्यूमिनियम) बाजार में उपलब्ध हैं । इन टेपों को खेत में फसल से कुछ अधिक ऊचाई पर चारों तरफ एवं आड़े तिरछे बॉधने से तोते से फसल को बचाने में सहायता मिलती है । बाजार में जूट, रेशम एवं धागे से बने जाल भी उपलब्ध हैं जिनसे फसल की सुरक्षा की जा सकती है । यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि प्रजाति का चुनवा ऐसा हो जिसका मुण्डक नीचे की तरफ झुक जाता हो क्योंकि ऐसी प्रजातियों में पक्षियों से नुकसान नहीं हो पाता है ।

कटाई एवं मड़ाई:

जब मुण्डक का पिछला भाग भूरे-सफेद रंग का होने लगे तभी फसल के मुण्डकों को काटकर 5-6 दिन तेज घूप में सुखाकर डण्डे से पीटकर दाने निकाल लिए जाते है । आजकल बाजार में सूरजमुखी गहाई यंत्र या थ्रेसर उपलब्ध है जिसकी सहायता से सूरजमुखी की मड़ाई की जा सकती है ।

उपज :

सूरजमुखी की खेती करने पर लगभग 22-28 क्विंटल बीज एवं 80-100 क्विंटल डण्ठल प्रति हैक्टर पैदा किये जा सकते हैं ।

सूरजमुखी की कम लागत वाली तकनीक :

फसल चक्र :

लागातार सूरजमुखी उगाने से तुलासिता रोग (डाउनी मिल्डयू) बढ़ता है । जिससे उत्पादन घट जाता है । सूरजमुखी को मुँगफली अथवा ज्वार के साथ फसल चक्र अपनायें । सामान्यत: दलहनी फसलों के साथ फसल चक्र लाभकारी होता है । 3-4 मौसम तक सूरजमुखी के अलवा अन्य फसल उगाना लाभकारी होता है ।

बीज उपचार:

रसायनों से बीजोपचार करना काफी लाभकारी होता है । तुलासिता रोग की रोकथाम के लिए बीजों को मेटालेक्सील (एप्रोन एसडी) की 6 ग्राम / कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए । बीज से पैदा होने वाले रोगों को रोकरने के लिए बीजों को थाईरम 3 ग्राम / कि.ग्रा. या बॉवीस्टीन 0.2 प्रतिशत अथवा इन्डोफील एम-45 से बीजोपचार करें । सूरजमुखी के रस चूसने वाले कीड़ो की रोकथाम के लिए बीजों को इमीडाक्लोपरीड से बीजोपचार करना काफी लाभदायक होता है । यह 30 दिनों तक फसल को कीटो से बचा सकती है ।

बुआई का समय :

भूमि में नमी हो जाने के कारण खरीफ में देर से बुआई करने या बारिश के मौसम के बाद बुआई करने से उपज में काफी कमी होती है । अत: जल्दी बुआई करना हमेशा अच्छा

रहता है जिससे फसल को नमी की कमी नहीं होती है । अगर सही समय पर बुआई नहीं की जाती है तो फसल पर कीड़ो एवं रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है । जिससे पैदावार में काफी कमी हो जाती है । और रोगों एवं कीड़ों की रोकथाम के लिए किसानों की लगात बढ़ जाती है । बुआई करते समय इस बात का ध्यान रखें की जब फसल में फूल आना शुरू हो या बीज बनने लगे तब लगातार बारिश नहीं होना चाहिए तथा बादल साफ होने चाहिए।

दूरी एवं पौध संख्या :

बुआई के 15-20 दिन बाद अवॉछनिय पौधो को निकाल देना चाहिए तथा संस्तुत दूरी पर पौधों को बुआई करें । हमेशा लाइनों में बुआई करना चाहिए जिससे खरपतवार निकालने, मृदा चढ़ाने में, उर्वरकों का उपयोग करने में, पौध सुरक्षा तथा कटाई में आसानी रहती है जिससे मजदुरों की कम आवश्यकता होती है जो लागत को कम कर देता है । प्रति हैक्टर पौधों की संख्या 75,000 के लगभग होना चाहिए ।

छितराना :

बीज के अकुंरित होने के 10-15 दिन बाद प्रत्येक हिल से एक स्वस्थ अंकुर को छोड़कर बाकी को हटा दें । अगर पौधों की संख्यॉ प्रति लाइन अगर कम है तो और बीज डाल देना चाहिए ताकी प्रति हैक्टर पौधों की संख्यॉ उपयुक्त हों । उचित पौध संख्या सूखे की स्थिति में अथवा कीटों के प्रकोप होने पर फसल को बचाता है । अगर पौधों की संख्या ज्यादा है तो पौधों में प्रतियोगिता होती है । जिससे मुण्डको का आकार छोटा हो जाता है और रोग एवं कीड़ों का प्रकोप भी ज्यादा होता है जिससे उत्पादन पर कुप्रभाव पड़ता है ।

खरपतवार निकालना :

खरपतवार सूरजमुखी के पौधो से भोजन, पानी, प्रकाश एवं नमी के लिए प्रतियोगिता करता है । सूरजमुखी बुआई के बाद 45 दिनों तक खरपतवारों के प्रति अति संवेदनशील होती है । अत: फसल की अच्छी बढ़वार के लिए खेत को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए । वैसे तो हाथ से खरपतवारो को निकाल देना चाहिए लेकिन अगर सम्भव नहीं हो तो बुआई के तुरंत बाद खरपतवारनाशी पेन्डीमीथेलान या फलूक्लोरेलीन का उपयोग करें। बुआई के 30-45 दिनों बाद अन्तरकृषि क्रियायें करना चाहिए । बुआई के 20 से 30 और 30 से 40 दिनों में दोबार हाथ से खरपतवारों को निकालना काफी उपयोगी होता है।

सिचांई :

सूरजमुखी की सामान्यत: पानी की मॉग कम होती है फिर भी अच्छा उत्पादन लेने के लिए कलियॉ निकलते समय फूल खिलते समय तथा शीर्षो या मुण्डको में बीज बनते समय तीन बार सिंचाई करें ।

पोषक तत्व प्रबंध :

सूरजमुखी की बढ़वार तेज होने के कारण इसकी पोषक तत्वों की मॉग भी ज्यादा होती है । सूरजमुखी की कम पैदावार का मुख्य कारण कम उर्वरता वाली मृदा में लगाना एवं संतुलित पोषक तत्वों का उपयोग नहीं करना है । सामान्यत: शुष्क क्षेत्रों के लिए संस्तुत उर्वरकों की मात्रा 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश एवं सिंचित क्षेत्रों के लिए 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 60 कि.ग्रा. पोटाश की मात्रा प्रति हैक्टर दें । यह मात्रा ज्यादा अवधि वाली प्रजातियों एवं संकर किस्मों के लिए संस्तुत की गई है । वही छोटी अवधि वाली प्रणातियों के लिए 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 30 कि.ग्रा. पोटाश की मात्रा प्रति हैक्टर संस्तुत की गई है । नाइट्रोजन की 50 प्रतिशत मात्रा बुआई के समय, 25 प्रतिशत कलियॉ बनते समय एवं 25 प्रतिशत मात्रा फूल खिलते समय दें । सल्फर फसल की पैदावार में काफी उपयोगी होती है इससे तेल की मात्रा में बढ़ोतरी होती है । सल्फर के उपयोग से 12 से 38 प्रतिशत ज्यादा पैदावार मिली है ।

पौधा सुरक्षा :

रोगों एवं कीड़ों से बचाव करने से पैदावार में बढ़ोत्तरी होती है । इनकी रोकथाम या सुरक्षा के लिए फसल चक्र अपनायें । क्योंकि लगातार सूरजमुखी उगाने से तुलासिता रोग (डाउनी मिल्डयू) में बढ़ोत्तरी हो जाती है । इसकी रोकथाम के लिए रोगरोधी प्राजाति जैसे डी.आर.एस.एच.-1 को लगा सकते है । बाजार में कई तरह के नये कीटनाशी दवा उपलब्ध है ।उनका उचित समय पर फसल पे छिड़काव करें । रसायनो का छिडकाव करते समय इस बात का ध्यान रखें की छिडकाव शाम के समय करें जब मधुखियों की संख्या ना के बराबर हो । क्योंकि यह रसायन मधुमक्खियों पर भूरा असर डालते है जिससे परागण में कमी आ जाती है । तथा पैदावार कम हो जाती है ।

पक्षियों से बचाव :

मख्यत: सूरजमुखी को तोता, कौआ, गिलहरी आदि नुकसान पहुँचाते हैं । अत: इससे बचाव के लिए फसल को ज्यादा क्षेत्रफल में लगाना चाहिए । इसके अलावा सुबह एवं शाम के समय जब फसल में फूल खिलने से लेकर बीज बनते समय रखवाली करनी चाहिए । आजकल बाजार में कही तरह की नेट उपलब्ध है । उनका उपयोग भी काफी लाभकारी सिद्ध होती है । इसके अलावा आजकल बाजार में एल्यूमिनियम की टेप मिलती है । जिसे फसल के थोडे ऊपर आड़े-तिरछे बॉधने से तोते के प्रकोप से फसल को बचाया जा सकता है ।

पूरक परागण :

2-3 मधुमक्खी के छते प्रति हैक्टर में रखने से बीज स्थापना में लाभ मिलता है । अगर मधुमक्खियॉ कम दिखाई दे तो सुबह एक दिन छोड़कर 8-11 बजे तक हर दूसरे दिन हाथ से परागण करें ।

सारणी-1 : अधिक उत्पादन एवं तेल की मात्रा वाली प्रजातियाँ

क्र.सं.	प्रजाति का नाम	जारी होने का वर्ष	पकने की अवधि (दिनों में)	उत्पादन क्षमता कि.ग्रा./हैक्टर	तेल की मात्रा (प्रतिशत)	मुख्य लक्षण
1.	ई. सी. 68415	1976	100-105	800-1000	36-39	खरीफ एवं रबी दोनों के लिए उपयुक्त
2.	मोर्डन	1978	82-85	800-1000	34-35	कम अवधि वाली प्रजाति
3.	सूर्या	1982	95-100	1000-2000	35-38	पर्णचिति रोग के प्रति प्रतिरोधी
4.	को-1	1983	65-70	600-900	35-38	बहुत जल्दी पकने वाली प्रजाति
5.	को-2	1986	80-85	900-1000	36-38	-
6.	को-3	1995	85-90	1000-1200	36-39	-
7.	को-4	1995	85-90	1000-1200	38-40	-
8.	एस.एस.-56	1988	82-88	800-1000	34-36	अल्प अवधि, एवं तुलासिता रोग के लिए प्रतिरोधी
9.	पी.के.वी.एस.एफ. - 9 (एके.एस.एफ.9)	1996	85-88	1000-1300	38-40	-
10.	गुजरात सूरजमुखी-1	1993	--	-	--	-
11.	एल.एस.-11	1998	85-88	1000-1200	36-39	तुलासिता रोग प्रतिरोधी
12.	डी.आर.एस.एफ.-108	2004	90-95	900-1200	36-39	तुलसिता रोग प्रतिरोधी
13.	सी.ओ.एस.एफ.वी.-5	2005	85-90	1000-1300	39-42	-
14.	एल.एस.एफ.-8	2006	90	1000-1400	36-39	पर्णचिति रोग, तुलासिता एवं स्तुआ रोग

						प्रतिरोधी
15.	टी.ए.एस.-82	2006	90-100	1200-1300	38-41	--
16.	डी.आर.एस.एफ.-113	2007	90-92	900–1000	36-39	--

सारणी-3 : उर्वरको की मात्रा

मात्रा	मात्रा (कि.ग्रा./हैक्टर)			मात्रा (कि.ग्रा./हैक्टर)		
	नाइट्रोजन	**फॉस्फोरस**	**पोटाश**	**नाइट्रोजन**	**फॉस्फोरस**	**पोटाश**
तत्वों की मात्रा	120	60	40	48	24	16
उर्वरको की मात्रा	260 (यूरिया)	375 (सिंगल सुपर फॉस्फेट)	66 (म्यूरेट ऑफ पोटाश)	104 (यूरिया)	150 (सिंगल सुपर फॉस्फेट)	26 (म्यूरेट ऑफ पोटाश)

सारणी-4 : पारम्परिक क्षेत्रों के लिए सूरजमुखी की संस्तुत प्रजातियाँ और संकर किस्में

राज्य	संकर	प्रजातियाँ
कर्नाटक	डी आर एस एच - 1, एम एस एफ एच - 8, बी एस एच - 1, के बी एस एच - 1, एम एस एफ एच-17, ज्वालामुखी, पी ए सी - 36, 1091, उी एस एच -1, के वी एस सच - 41, 42, 44, आर एस एफ एच - 1, एस एच - 416, सनजेन-85	मोर्डन, टी एन ए यू एस यू एफ-7, डी आर एस एफ-108
महाराष्ट्र	उी आर एस एच - 1, एम एस एफ एच - 8, के बी एस एच - 1, एम एस एफ एच-17, एल एस एच - 1,3, पी के पी एस एस - 27, सनजेन - 85, पी ए सी - 36, पी ए सी - 1091, एम एल एस एफ एच - 47, वे बी एस एच - 44, फूले रविराज	परो सन - 09, एस एच - 416
आन्ध्र प्रदेश	डी आर एस एच - 1, ए पी एस एच-11, एम एस एफ एच-8, के बी एस एच - 1, एम एस एफ एच-17, ज्पवालामुखी	मोर्डन, टी एन ए यु एस यू एफ-7, सूर्या, एस एस-56, एल एस - 11, डी आर एस एफ - 108
तमिलनाडू	डी आर एस एच - 1, सनजेन-85, पी एसी - 36, पी ए सी - 1091, एम एल एस एफ एच - 47, के वी एस एच - 44, एन डी एस	मोर्डन, टी एन ए यू एस यू एफ - 7, डी आर एस एफ - 108

	एच - 1, एस एच - 416, टी एन ए यू एस एफ एच को-2	

सारणी -5 : गौर पारम्परिक क्षेत्रों के लिए सूरजतुखी की संस्तुत प्रजातियॉएवं संकर किस्में

राज्य	संकर	प्रजातियॉ
पंजाब	के वी एस एच - 1, पी एस एफ एच - 47, ज्वालामुखी, सनजेन-85, पी ए सी - 36, पी एम एफ एच - 118, के वी एस एच - 44	मोर्डन , डी आर एस एफ - 108
हरियाण	के वी एस एच - 1, ज्वालामुखी, सनजेन-85, पी एव सी - 36, के वी एस एच - 44, परो सन - 09, एच एस एफ एच - 848	मोर्डन, डी आर एस एफ - 108
गुजरात	के वी एस एच-1, ज्वालामुखी, सनजेन-85, पी ए सी - 36, पी ए सी - 1091, एस एल एस एफ एच-47, के वी एस एच-44, एस एच-416	जी ए यू एस यू एफ-15, मोर्डन, उी आर एस एफ - 108, टी एन ए यू एस यू एफ-7
अन्य राज्यों	के वी एस एच-1, ज्वालामुखी, सनजेन-85, पी ए सी -36, पी ए सी - 1091	-

सारणी-5 : भिन्न - भिन्न राज्यों के लिए उर्वरको की संस्तुत मात्रा

राज्य / परिस्थिति	N : P : K की संस्तुत मात्रा	विशेष संस्तुति
आन्ध्र प्रदेश कोस्टल तेलंगाना	40:40:20 30:30:20	--
गुजरात खरीफ सेमी रबी	30:25:0 25:25:0	20-40 कि.ग्रा./हैक्टर-उपयोग करें
मध्य प्रदेश / छतीसगढ़ बारा क्षेत्र गर्मी	40:30:20 60:40:20	जिंक की कमी वाली मृदा में 25 कि.ग्रा./हैक्टर जिंक सलफेट का प्रयोग करें ।
महाराष्ट्र	50:0:0	बुआई के 3 सप्ताह बाद आधी नाइट्रोजन का उपयोग करें । एवं बची

		हुई नाइट्रोजन की मात्रा का उपयोग 6 सप्ताह बाद ।
राजस्थान भारी मृदा हल्की मृदा	20:20:0 40:25:0	जहॉ पर 350 मिमी. वर्षा हो जहॉ पर 350 मिमी.से ज्यादा बारिश होती हो ।
उड़ीसा	30:20:30	-
तमिलनाडू सिंचित बारानी	35:23:23 25:15:15	600 ग्राम एजोस्प्रीलोयम उपयोग से बीजोपचार करें ।
उत्तर प्रदेश/ उत्तराखण्ड	20:10:0	--
हरियाण	30:0:0	-
बिहार / झारखण्ड़	40:40:0	-
पश्चिम बंगाल सिंचित बारानी	50:25:25 25:13:13	आलू के बाद अगर तिल बोये तो उर्वरक नहीं ड़ाले
असम	30:30:20	सारी मात्रा को भूमि में ड़ाले (बुआई के समय)
केरल	30:15:30	बुआई के 30-35 दिन बाद नाइओ्रजन की 75 प्रतिशत मात्रा का बेसल डाले + 25 प्रतिशत का 2प्रतिशत यूरिया का पर्णीय छिड़काव करें ।
कर्नाटक	37.5:25:25	--

सूरजमुखी परिगलन रोग

सूरजमुखी में रस चूसने वाले कीड़ा (थ्रिप्स)

खरपवतार मुक्त सूरजमुखी की फसल

सूरजमुखी की शानदार फसल

तिल की कम लागत की तकनीक

एच.पी.मीणा एवं प्रद्युम्न यादव

तिल एक बहुत पुरानी तिलहनी फसल है । तिल के बीज खाने योग्य तेल के अच्छे स्रोत होते है । तिल मुख्यत: अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग नाम से जानी जाती है । जैसे हिंदी में तिल, गुजराती में तल, पंजाबी, असमी, बैंगाली एवं मराठी में तिल, तेलगु में नुवुलू, मानची नुवूलू, तमिल, मलायलम एवं कनड़ में एलू, संस्कृत में तिला / पितरातरपना और उड़ीया में रासी के नाम से जानी जाती है । तिल में 50 प्रतिशत तेल की मात्रा, 25 प्रतिशत प्रोटीन एवं 15 प्रतिशत कार्बोडाइट्रेस उपस्थित होते है । तिल का हमारे धर्म एवं संस्कृति में काफी योगदान है । तिल की खली प्रोटीन की अच्छी स्रोत होती है अत: इसका मुर्गीपालन एवं पशुपालन में भोजन के रूप में उपयोग करते है । इनके अलावा तिल का तेल साबुन बनाने में, पेन्टस, फयूम और कीटनाशी के रूप में इस्तेमाल किया जाता है । तिल को "तेलो की रानी" भी कहा जाता है क्योंकि इसके बीजों में पर्याप्त मात्रा में मिथियोनीन, ट्रीफ्टोफेन,एमीनो एसीड़ उपस्थित होने के कारण इसके तेल का प्रयोग आयुर्वेद्ध में किया जाता है । 75 प्रतिशत के लगभग भारत में उगाये गये तिल के बीजों का उपयोग तेल निकालने में किया जाता है । जिसका लगभग 73 प्रतिशत तेल को खाने के रूप में उपयोग किया जाता है । एवं 4.2 प्रतिशत तेल का प्रयोग उद्योगों में पेन्टस या कीटनाशी बनाने में किया जाता है । तिल गरीब लोगों के भोजन के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है । तिल के बीजों को गुड़ में मिलाकर खाते है । तिल की खली का प्रयोग खाद्य के रूप में भी किया जा सकता है क्योंकि इसमें 6.0 से 6.2 प्रतिशत नाइट्रोजन, 2.0-2.2 प्रतिशत फॉस्फोरस और 1.0-1.2 प्रतिशत पोटाश होता है ।

भारत, चीन, सूड़ान, मेक्सिकों, तुर्की, बर्मा और पाकिस्तान तिल उगाने वाले मुख्य देश है । भारत तिल का सबसे बड़ा उत्पादक देश है । भारत में तिल मुख्यता उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र गुजरात, तमिलनाडू, उड़ीसा और कर्नाटक् राज्यों में उगाया जाता है । इनके अलावा अन्य राज्यों में कम क्षेत्रफल में उगाया जाता है । भारत में ज्यादा तिल उत्पादक राज्य गुजरात, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, राजस्थान, मध्य प्रदेश, तमिलनाडू, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश एवं उड़ीसा है ।

उगाने का मौसम :

तिल सभी मौसम में उगाई जाने वाली फसल हैं । इसे खरीफ, रबी, एवं गर्मी के मोसम में उगाया जाता है । तिल एक गर्म क्षेत्रों की फसल है । तेज अंकूरण के लिए 25-27 डिग्री सेल्शियस तापमान उपयुक्त रहता है । अगर फूल बनते समय तापमान कम रहता है तो पराग बंध्य या बॉझ होते है और पकने से पहले फूल गिरने लगते है । लगातार भारी बारिश एवं पानी जमाव के प्रति तिल अति संवेदनशील होता है । इसके अलावा पाले, लगातार भारी बरिश अथवा सूखे की स्थिति में भी फसल खड़ी नहीं रहती है । उत्तर भारत

के लिए बुआई का उचित समय जून के अन्तिम सप्ताह से जूलाई के पहला सप्ताह है । जबकि दक्षिण भारत में बुआई का समय भिन्न-भन्न होता है यह खरीफ में मई से जूलाई जबकि रबी मौसम में अब्टूबर से नवम्बर तक होता है । अलग-अलग राज्यों में बुआई का उचित समय एवं पौधो से पौधों एवं लाइनों से लाइनों की दूरी सारणी-1 में दी गई है ।

मृदा :

तिल को किसी भी प्रकार की भूमि में लगाया जा सकताहै लेकिन इसकी अच्छी उपज के लिए उपयुक्त नमी वाली रेतीली दोमट मृदा अच्छी रहती है । बहुत ज्यादा रेतीली, लवणीय एवं अम्लीय मृदा तिल की खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती है । वैसे तो उदासीन पी्एच् वाली मृदा पसन्द की जाती है । लेकिन थोड़ी सी अम्लीय एवं थोडी क्षारीय मृदा में भी अच्छा उत्पादन मिलता है । तिल की फसल को पी.एच. 5.5 से 8.0 के बीच वाली मृदा में उगाया जा सकता है ।

फसल चक्र :

खरीफ में तिल की फसल को अकेले या दुसरी फसलों के साथ भी उगाया जाता है । उत्तर भारत में सामान्यत: तिल को अरहर, ज्वार, बाजरा, मुँगफली, कपास और मक्का के साथ लगाया लाता है । तिल की फसल में अन्तर फसल लगाने से भी पैदावार अच्छी मिलती है । तिल की फसल में अन्तर फसल पद्धति सारणी-2 में दी गई है ।

खेत की तैयारी :

अच्छे बीज के अंकुरण के लिए खेत को अच्छी तरह तैयार करें क्योंकि तिल का बीज आकार में बहुत छोटे होते है । इसके लिए खेत की गर्मी में एक गहरी जुताई करे बाद में दो से तीन बार हेरो से जुताई करें । अगर जरूरत हो तो आखिरी जुताई के समय खेत में गोबर की खद ड़ाले एवं अच्छी तरह मिला हैं ।

बीज की बुआई :

तिल की फसल को हमेशा लाइनों में बुआई करना चाहिए । सामान्यत: लाइनों से लाइनों के बीच की दूरी 45 से.मी. और पौधों से पौधो के बीच की दूरी 15 से.मी. रखें । खेंत में बीज के समान वितरण के लिए बीज को सूखी मृदा या रेत अथवा गोबर की खाद के चूर्ण में मिलाकर बुआई करें । बीज की गहराई 2-3 से.मी. से ज्यादा नहीं होनी चाहिए । लाइनों एवं पौधों की दूरी अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग रखते है । पौधों से पौधों एवं लाइनों से लाइनों की दूरी सारणी-1 में दी गई है ।

प्रजातियॉ :

तिल की फसल मौसम में बदलाव के प्रति बहुत ज्यादा संवेदनशील होती है । अत: तिल की संस्तुत प्रजातियॉ मोसम एवं स्थान के लिए अलग-अलग होती है । अलग-अलग

राज्यों के लिए संस्तुत प्रजातियॉ सारणी-3 में दी गई हैं । तिल की अच्छी वाली प्रजातियॉ उनके मुख्य लक्षणों सहित सारणी-4 में दी गई है ।

बीज दर :

प्रति हैक्टर पौधो की उचित संख्या बनाये रखने के लिए 5 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से बुआई करें । जबकि जहॉ पर बुआई बीज बोने की मशीन (सीड़ ड्रिल) से की जाती है वहॉ बीज दर 2.5 से 3.0 कि.ग्रा./हैक्टर के हिसाब से ड़ाले । फसल में आसानी से शास्य क्रियाये करने के लिए बीज की बुआई हमेशा लाइनों में करें ।

बुआई की विधि :

समान रूप से बीज का वितरण करने के लिए बीज में सूखी मृदा या रेत अथवा चूर्ण बने हुए गोबर की खाद में 1 : 20 के अनुपात में मिलाये । उदाहरण के लिए एक हैक्टर खेत के लिए 5 कि.ग्रा. बीज की जरूरत पड़ती है । अत: 5 कि.ग्रा. बीज में 100 कि.ग्रा. सूखी मृदा या रेत या गोबर की खाद का चूर्ण मिलावें । लाइनों में बुआई करने के लिए देशी हल या बीज बोने की मशीन (सीड़ ड्रील) का उपयोग करें । तिल के बीजों को उचित गहराई (2.5से.मी.) पर बुआई करें । गहरी बुआई न करें क्योंकि यह बीज के अंकूरण पर कुप्रभाव डालती है ।

बीज उपचार:

बीज जनित रोगों से फसल को बचाने के लिए बावस्टीन 2 ग्राम / कि.ग्रा. बीज की दर से बुआई से पूर्व बीजोपचार करना चाहिए । जबकि जीवाणुओं से होने वाली बिमारी पत्ती धब्बे रोग से फसल को बचाने के लिए बीजों को 0.25 प्रतिशत एग्रोमाइसीन-100 के घोल में बीजों को 30 मिनट तक डबोकर रखें ।

खाद और उर्वरक :

सामान्यत: तिल की फसल गरीब किसानों द्वारा कम उर्वरता वाली मृदा में बिना खाद एवं उर्वरक के उगायी जाती है । जिसका प्रभाव कम पैदावार के रूप में देखने को मिलता है । अच्छी पैदावार लेने के लिए बुआई से एक महिने पहले खेत में आखिरी जुताई से पहले 20-25 टन कम्पोस्ट या गोबर की खाद ड़ाले । और बाद में जुताई कर खेत में अच्छी तरह मिला दें । अधिक उपज लेने के लिए कार्बनिक खाद के अलावा 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैटर की दर से ड़ाले । नाईट्रोजन एवं फॉस्फोरस का उपयोग प्रति पौधा फलियों (केप्सूल) की संख्या एवं प्रति फली बीजों की संख्यॉ में बढोतरी करते है । उर्वरकों की मात्रा प्रजाती, मौसम, मृदा उत्पादकता, पहले मौसम में बोयी गई फसल, वर्षा एवं मृदा में उपस्थित नमी पर निर्भर करती है । अत: अलग-अलग क्षेत्रों / परिस्थितियों के लिए संस्तुत नाईट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश की मात्रा अलग-अलग होती है । संस्तुत मात्रा सारणी-5 में दर्शायी गई है । ध्यान रहें नाइट्रोजन की आधी मात्रा,

फॉस्फोरस एवं पोटाश उर्वरक की पुरी मात्रा बुआई के समय ड़ालें । रेतीली मृदा में, नाइट्रोजन को तीन बार और भारी मृदा में दो बार में ड़ाले । रेतीली मृदा में नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा को बुआई के समय, एक तिहाई मात्रा बुआई के 30 दिन बाद एवं बची हुई एक तिहाई मात्रा को बुआई के 50 दिन बाद ड़ालें । भारी मृदा में दो तिहाई मात्रा बुआई के समय एवं एक तिहाई मात्रा फूल आते समय देने से अच्छी उपज मिलती है ।

खरपतवार नियंत्रण एवं शास्य क्रियाये :

फसल में बुआई के समय के बाद 40 दिन तक क्रान्तिक फसल खरपतवार प्रतियोगिता रहती है । पहले 20 से 25 दिन तक फसल खरपतवारों के प्रति अति संवेदनशील होती है । फसल को नमी एवं पौष्क तत्व उपलब्ध कराने के लिए एवं खेत को खरपतवार रहित रखने के लिए दो बार खेत से खरपतवार निकालें । पहला बुआई के 15-20 दिन बाद एवं दुसरा बुआई के 30-35 दिन बाद खरपतवार निकालें । फसल में अन्त: शस्य क्रियायें करने के लिए हाथ से चलने वाले ओजार हो या बेलों से चलने वाले पत्तीदार हैरो का प्रयोग करें । बुआई से पूर्व 1.5 कि.ग्रा. / हैक्टर की दर से फ्लूक्लोरेलिन अथवा फसल उगने से पहले1.5 कि.ग्रा./है. की दर से एलाक्लोर का उपयोग खरपतवारों की समस्या से निजात दिलाते है । इनके बाद बुआई के 30 दिन बाद एक बार हाथ से गुड़ाई करें ।

सिंचाई प्रबंध :

वैसे तो फसल से सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ती है लेकिन यह फसल सूखे के प्रति संवेदनशील है । तिल की फसल को अपने पुरे जीवनकाल में 50 से.मी. पानी की जरूरत पड़ती है । खरीफ मौसम में जब लगातार बारिश न हो तो फसल को जीवन रक्षक सिंचाई देना चाहिए । अगर बुआई के समय मृदा में नमी की कमी हो तो बुआई के तुरन्त बाद सिंचाई दें । जिससे बीजो का अंकुरण अच्छा हों । मृदा के प्रकार, मौसम की दशा एवं मौसम के आधार पर फसल में 12-15 दिन के अतंराल से सिंचाई दें । पहली सिंचाई बुआई के 25-40 दिन बाद दे । दूसरी एवं तीसरी सिंचाई फूल आते समय एवं फलियॉ बनते समय जरूर दें । अच्छी बीज भराई एवं ज्यादा पैदावार के लिए, फूल शुरू होते समय (45 से 50 DAS) एवं फलियॉ बनते समय (65-70 DAS) सिंचाई अवश्य है ।

कीट प्रबंध :

1) **लीफ रोलर** : फसल की प्रारम्भिक अवस्था में सूंडी पत्तियों को खाती है । एवं पत्तियों को लपेट कर उनके अन्दर छीप कर रहती है । कीट का पहला प्रकोप तब होता है जब फसल 15 दिन की होती है । यह कीट जुलाई से सितम्बर तक रहता है । इसकी राकथाम के लिए जल्दी बुवाई करें (जुलाई के पहले सप्ताह) । कीट प्रतिरोधी प्रजातियों जैसे आर.टी.-46, आर.टी.-54, आर.टी.-103, आर.टी.-125, टी.के.जी.306, हिमा, पी.के.वी.एन.टी.11, टी.के.जी.-55, टी.के.पी.-21, टी.के.जी.-22 और जे.टी.एस.-8

को उगायें । पत्तियों की शिराओं पर उपस्थित कीट के लारवा को हाथ से पकड़कर नष्ट कर दें । कीट की सँख्या कम करने के लिए फसल चक्र अपनाये । कीटों की रोथाम के लिए भूमि में फोरेट 10 जी की 10 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें । बुआई के 30 और 45 दिन बाद दो बार फोस्लोन 4 प्रतिशत, मेलाथियोन 5 प्रतिशत और एण्डोसल्फान 4प्रतिशत की 25 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर की दर से भूरकाव करें ।

2) **फली छेदक (केप्सूल बोरर)** : यह कीट फसल की प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों को खाता है । फूल आते समय लरवा, फूल को अन्दर से खाता है । तथा फत्तियॉ बनते समय लारवा फलियों में घुसकर बनने वाले दानों को खाता है । इसकी रोकथाम के उपाय लीफ रोलर कीट के समान ही हैं ।

3) **बड़ मक्खी (बड फलाई)** : मैगट फूल में बनने वाली कलियों को खा जाते है जिससे गाल जैसी संरचना बन जाती है । जो फूल या फलियों में विकास नहीं हो पाता है कीट के प्रकोप वाली फलियॉ बाद में गिर जाती है । यह कली बनते समय सबसे ज्यादा नुकसान पहुचाती है । यह कीट सितम्बर से अक्टूबर तक सक्रिय रहता है । इसकी रोकथाम के लिए मैगट को हाथ से पकड़ कर नष्ट करें । कीट प्रतिरोधी प्रजातियों जैसे एम.टी.-75 और शेखर को लगावें । फसल में कलियॉ बनते समय डाइमिथोयट 0.03 प्रतिशत या एण्डोसल्फॉन 0.07 प्रतिशत का छिडकाव करें।

4) **गाल फ्लाई** : इसके लक्षण कली मक्खी की तरह ही होते है । यह सितम्बर से नवम्बर तक सक्रिय रहता है । इसकी रोकथाम के लिए कीटरोधी प्रजातियॉ जैसे आर.टी.-46, स्वेता तिल,आर.टी.-103, ओ.एम.टी. -26, आर.टी.–127, हिमा और आर.टी.-125 को लगावें । फसल में कलियॉ बनते समय डायमेथोएट 0.03 प्रतिशत या एण्डोसल्फान 0.07 प्रतिशत का छिड़काव करें ।

5) **लिफ होपर** : किशोर अवस्था एवं प्रौढ़ अवस्था दोनों पौधों के भागों से रस चूसते है । यह एक बहुत ही खतरनाक कीट है । जो तिल के फिलोडी रोग में सहायक होता है । यह प्रारम्भिक अवस्था से फलियॉ बनते समय तक नुकसान पहुँचाता है । यह जूलाई से सितम्बर अन्त तक सक्रिय रहता है । इसकी रोकथाम के उपाय गाल फ्लाई के समान है।

6) **बालो वाली सूँड़ी (बिहार हेरी केटरपिलर)** : प्रारंम्भिक अवस्था में, लारवा कुछ पोधों को टारगेट करते है । प्रौढ़ सुंड़ी दुसरे पौधों पर जाती है । एवं पौधे के भागों को खा जाती है । बाद में तने पर जिंदा रहती है । यह पौधे की प्रारम्भिक अवस्था से शुरू होकर पकने की अवधि तक नुकसान पहुचाते है । यह कीट अगस्त से अक्टूबर तक सक्रिय रहता है । इसकी रोकथाम के लिए अण्डों को और जवान लारवा को नष्ट कर दें । कीट प्रतिरोधी प्रजातियों जैसे रामा और टीलोटामा को लगावें । कलियॉ बनते समय डाइमेथोएट (0.03%) या एण्डोसल्फान (0.07%) का छिड़काव करें । बुआई के

30 और 45 दिन बाद फोसेलोन(4%), मेलाथियोन (5 %) और एण्डोसल्फान (4%) की 25 कि.ग्रा. मात्रा को प्रति हैक्टर की दर से बुरकाव करें ।

रोग प्रबंध :

1) **जड़ एवं तना गलन** : यह रोग तना एवं जड़ पर प्रकट होता है । रोग से प्रभावित पौधे मुरझाने लगते है । भूमि की सतह से तना काला पड़ जाता है । उसके अलावा प्रभावित तने पर काले रंग की बिन्दु नजर आती है । अगर मुरझाये हुए पोधे के जड़ों को उखाड़े तो जड़े काले रंग की दिखाई देती है । यह रोग फसल की प्रारम्भिक अवस्था से पकने की आवधि तक आ सकता है । इसकी रोकथाम के लिए कम से कम दो साल तक उस खेत में तिल की खेती नहीं करें । गर्मी में खेत की गहरी जुताई करें । रोगमुक्त बीज का ही उपयोग करें । रोगरोधी प्रजातियॉ जैसे आर.टी.-46, आर.टी.–54, आर.टी.-103, आर.टी.-125, आर.टी.-127, टी.के.जी.-55, जे.टी.एस.-8, एम.टी.-75, निरमला का चयन करें । रोग प्रभावित पौधो को उखाड़ कर नष्ट कर दें । बीज को ट्राइकोड्रमा विरीडी या ट्राइकोड्रमा हारजेनियम या बेसिलस सबटीलीस (0.4%) या थाईरम 75 एस.डी (0.2%), बाविस्टिन (0.1%) या थाईरम 75 एस.डी. (0.3%) से बीजोपचार करें ।
2) **बेक्टेरियल ब्लाइट :** पत्तियों पर बिना आकृति वाले छोटे-छोटे पानी के धब्बे जैसे प्रकट होता है । बाद में धब्बे संख्या मे बढ़ जाते है एवं भूरे रंग में बदल जाते है । बाद में धब्बे टहनियों पर बन जाते है । जिससे कम संख्या में फलियॉ बनती है । पहले लक्षण 4 पत्त्यिों वाली अवस्था में प्रकट होते है जो लगातार पकने तक बनते रहते है । इस रोग से निधान पाने के लिए 10 मिनट तक गर्म पानी में 50 डिग्री सेल्शियस तापमान पर बीजोपचार करें। 30 मिनट तक बीजों को एग्रीमाइसीन - 100 (250 पी.पी.एम) अथवा स्ट्रेप्टोसाक्लीन (0.05%) के घोल में रखें। लक्षण दिखते ही फसल पर स्ट्रेप्टोसाइक्लीन या प्लानटोमाइसीन (500 पी.पी.एम.) का पर्णीय छिड़काव करें ।
3) **जीवाणु जनित पत्ति धब्बे (बेक्टेरियल लीफ ब्लाइट)** : पत्तियों की शिराओं पर छोटे हल्के भूरे रंग से भूरे रंग के धब्बे बनते है । अधिक आर्द्रता एवं तापमान में धब्बे आकार में बढ़ जाते है ।रोग के ज्यादा प्रकोप में शिराओं के साथ-साथ पिटोमोल और सुखने जैसे दिखता है । यह रोग पौधे की 4-6 पत्तियों वाली अवस्था से लगातार पकने तक रहता है । इसकी रोकथाम बेक्टेरियल ब्लाइट के समान ही होती है ।
4) **अल्टरनेरिया लीफ स्पोट** : पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बे गोल आकार से लेकर आकार रहित हो सकते है । इसकी मुख्य विशेषता यह होती है कि वो छल्लेदार होते है । फसल पर धब्बे उस समय दिखाई देते है जब फसल एक महिने पुरानी होती है । इसकी रोकथाम के लिए रोगप्रतिरोधी प्रजातियॉ जैसे टी.सी.-25, आर.टी.-46, आर.टी.-54, जे.टी.एम.-8, शेखर, उुषा, टी.एस.एस.-6, निरमला और आर.टी.-125 को ही

लगावें । रोग प्रकट होने पर पन्द्रह दिन के अन्तराल पर डाइथेन एम-45 (0.2%) का छिड़काव करें ।

5) **पाउडरी मिल्डयू :** पत्तियों पर छोटे कपासी या रूई जेसे धब्बे दिखाई देते है । बाद में वो लेमिना की तरफ फैल जाते है । पकने से पहले पौधे पर डिफोलियसन प्रकट होता है ।यह रोग 45 दिन से पकने की अवधि तक आता है । इसकी रोकथाम के लिए जल्दी बुआई करे (मानसून आने के तुरंत बाद) । रोगरोधी प्रजातियों जैसे श्वेता, आर.टी.-121, एम.टी.-75 को लगावें । 20 दिन के अंतराल पर 2 से 3 बार वेटेबल सल्फर (0.2%) या बाविस्टिन (0.1%)या टील्ट (0.1%) का पर्णीय छिड़काव करें ।
6) **फिलोडी** : यह एक घातक रोग है जिसमें सभी फूल वाले भाग हरे रंग के पत्तिदार संरचना में बदल जाते है 1 अचानक असामान्य शाखायें निकल जाती है । जो ऊपरी भाग को निचे झुका देती है । इस रोग से प्रभावित पौधे फलियाॅ नही बना पाते है । अगर पौधे के नीचले हिस्सों में फलियाॅ बन भी जाती है तो उनसे उच्च गुणवत्ता वाले बीज या पैदावार नहीं मिलती है । यह मुख्यत: फूल बनते समय आता है ।इसकी रोकथाम के लिए सबसे पहले खेत से रोगी पौधों को उखाड़ फेकें । मानसून आने के 3 सप्ताह तक फसल की बुआई ना करें । तिल + अरहर (1:1) अन्तर फसल का उपयोग करें । रोग प्रतिरोधी प्रजातियों जैसे जे.टी.-21, श्वेता, रामा, शेखर को ही लगावें। मृदा में 10 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से फोरेट ड़ाले । बुआई के 30, 40, और 60 दिन बाद डाइमिथोएट का तीन बार छिड़काव करें ।

कटाई एवं गहाई :

जब पौधे की पत्तियाॅ पीले रंग में बदलने लगे और गिरना शुरू हो जावें एवं निचली सतह की फलियाॅ पीले रंग की हो जायें तो समझ लेना चाहिए की फसल कटाई के लिए तैयार है । अगर कटाई समय पर नहीं की गई तो बाद में फलियाॅ चिटकने लगती है । जिससे उपज पर कुप्रभाव पड़ता है । गहाई उस समय करे जब पौधा व फलियाॅ पुरी तरह सुख जायें । गहाई हाथ से डण्ड़े द्वारा पिटकर की जाती है ।

ज्यादा पैदावार लेने के तरीके :

1) हमेशा संस्तुत प्रजातियों की अच्छी गुणवत्ता वाले बीज ही उपयोग में ले।
2) बुआई से पूर्व संस्तुत जीवाणुनाशी और कवकनाशी से बीजो को जरूर उपचारित करें ।
3) जहाॅ तक सम्भव हो अच्छे समतल खेत का चयन करें । जिसमें जल निकास की उचित सुविधा हों ।
4) सही समय पर फसल की बुवाई करें ।
5) पौधे से पौधे एवं लाइनों से लाइनों के बीच उचित दूरी रखें ।
6) बुआई के 20 से 30 दिन तक खेत को खरपतवार रहित रखना चाहिए ।
7) खाद एवं उर्वरक की संस्तुत या सुझायी गई मात्रा सही समय पर दें ।
8) कीट एवं रोगों से फसल की सुरक्षा करना चाहिए ।

9) खरीफ में अगर बारिश नहीं हो रही हो तो फसल को बचाने के लिए जीवनरक्षक सिंचाई दे । वही रबी एवं गर्मी की फसल में क्रान्तिक अवस्था पर सिंचाई दें ।

10) भण्डारण से पूर्व बीजो को अच्छी तरह सुखा लें ।

सारणी-1 : अलग-अलग राज्यों में बुवाई का उचित समय एवं पौधे व लाइनों की दूरी

राज्य	मौसम	बुआई का समय	दूरी (से.मी.)
आन्ध्रप्रदेश	खरीफ	--	30 x 15
तेलंगाना	खरीफ	--	30 x 10-15
गुजरात	खरीफ	जून के अन्तिम सप्ताह से जुलाई के दुसरे सप्ताह तक	60 x 10
	आधी रबी	सितम्बर के मध्य	45 x 10
	गर्मी	जनवरी-फरवरी	45 x 15
मध्य प्रदेश	खरीफ	जुलाई के पहले सप्ताह	30 x 10-15
	आधी रबी	अगस्त के अन्त, सितम्बर की शुरूआत तक	30 x 15
	गर्मी	फरवरी के अन्तिम सप्ताह से मार्च के पहले सप्ताह तक	30 x 15
महाराष्ट्र	खरीफ	जून के दूसरे सप्ताह सू जूलाई के पहले सप्ताह तक	30 x 15
	आधी रबी	सितम्बर के शुरूआत में	30 x 15
	गर्मी	फरवरी	45 x 15
राजस्थान	खरीफ	जून के अन्त से जूलाई की शुरआत तक	30 x 15
उड़ीसा	खरीफ	जून-जूलाई	30 x 15
	रबी	सितम्बर- अक्टूबर	30 x 15
	गर्मी	फरवरी	30 x 15
उत्तर प्रदेश	खरीफ	जूलाई के दुसरे सप्ताह	30-45 x 15
पंजाब एवं हरियाणा	खरीफ	जूलाई के दूसरे सप्ताह	30 x 10-15
पश्चिम बंगाल	खरीफ	मई के अन्त से जून के पड़ीग सप्ताह तक	30 x 15
	रबी	सितम्बर-अक्टूबर	30 x 15
	गर्मी	फरवरी - मार्च	30 x 15
	खरीफ	मई के दुसरे सप्ताह से जून के दुसरे सप्ताह तक	22.5 x 22.5

तमिलनाडू	रबी	नवम्बर-दिसंबर	22.5 x 22.5
	गर्मी	जनवरी से मार्च तक	30 x 10
उत्तरी कर्नाटक	खरीफ	जून-जूलाई	30 x 15
दक्षिण कर्नाटक	खरीफ	अप्रैल- मई	30 x 15
असम	खरीफ	जूलाई-अगस्त	30 x 10-15
बिहार/झारखंड	खरीफ	जून-जूलाई	30 x 15
केरल	खरीफ	अगस्त	30 x 10-15
	गर्मी	दिसम्बर	30 x 15

सारणी-2 : तिल की फसल में अन्तर फसल पद्धति

राज्य	अन्तर फसल
उत्तर प्रदेश	तिल + मुँग (2:1) तिल + अरहर (3:1)
मध्य प्रदेश	तिल + मुँग (2:2 अथवा 3:3) तिल + उड़द (2:2 अथवा 3:3) तिल + सोयाबीन (2:1 अथवा 2:2)
राजस्थान	तिल + बाजरा (1:1) तिल + मोठ (1:1)
गुजरात	तिल + मुँगफली (3:3) तिल + उड़द (3:3) तिल + बाजरा (3:1), तिल + कपास (3:1)
महाराष्ट्र	तिल + बाजरा (3:1) तिल + उड़द (3:।) तिल + मक्का (2:1)
कर्नाटक	तिल + मुँगफली (1:4)
तमिलनाडू	तिल + मुँग (3:3) तिल + उड़द (3:3) तिल + अरहर (3:1) तिल + मुँगफली (2:4)
पश्चिम बंगाल	तिल + मुँगफली (1:3 अथवा 2:3)
उड़ीसा	तिल + गर्मी में मुँगफली (2:3) तिल + मुँग / उड़द (2:2)

सारणी- 3: सोयाबीन की उन्न्त किस्में

किस्में	पैदावार (कु./हैक्टर)	उपयुक्त क्षेत्र एवं पकने की अवधि (दिनों में)

पी.के.-1029	25-30	दक्षिण क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 90 से 95 दिन में पकती है ।
पी.के.-1092	30-35	उत्तर प्रदेश के सभी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त । 118 से 125 दिन में पकती हैं ।
हरित सोया	20-25	उत्त्र पहाडी क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 108 से 130 दिन में पकती है ।
एस.-93-05	20-25	मध्य प्रदेश, उत्त्र पाश्चिमी महाराष्ट्र, राजस्थान, बुन्देलखण्ड व उत्तर प्रदेश के लिए उपयुक्त ।90 से 95 दिन में पकती है ।
एस.-335	25-30	मध्य पूर्व व दक्षिण क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 95 से 100 दिन में पकती हैं ।
पी.के.-1042	30-35	उत्तर भारतीय क्षेत्र के लिए उनयुक्त । 110 से 119 दिन में पकती हैं ।
वी.एल.एस.-47	25-30	उत्तर पहाड़ी क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 122 से 175 दिन में पकती हैं ।
एन.आर.सी.-37	35-40	मध्य क्षेत्र व महाराष्ट्र के लिए उपयुक्त । 96 से 101 दिन में पकती हैं ।
एम.ए.यू.एस.-2	25-30	दक्षिण क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 105 से 110 दिन में पकती हैं ।
पी.के.-1024	25-30	उत्तर क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 115 से 118 दिन में पकती हैं ।
पूसा - 9712	20	दिल्ली के लिए उपयुक्त ।
इन्दिरा सोया-3	25-30	मध्य प्रदेश व छतीसगढ़ क्षेत्र के लिए उपयुक्त । 106 दिन में पकती हैं ।
पूसा-9814	22-5	उत्तर क्षेत्र में सिंचित अवस्था के लिए उपयुक्त ।

सारणी - 4 : पारम्परिक क्षेत्रों के लिए सूरजमुखी की संस्तुत प्रजातियॉ और संकर किस्में

राज्य	संकर	प्रजातियॉ
कर्नाटक	डी आर एस एच -1, एम एस एफ एच-8, बी एस एच - 1, के वी एस एच - 1, एम एस एफ एच-17, ज्वालामुखी, पी ए सी - 36, 1091, डी एस एच - 1, के वी एस एच - 41, 42, 44, आर एस एफ एच-1, एस एच-416,	मोर्डन, टी एन ए यू एस यू एफ-7, डी आर एस एफ - 108

	सनजेन-85	
महाराष्ट्र	डी आर एस एच-1, एम एस एफ एच-8, के वी एस एच -1, एम एस एफ एच-17, एल एस एच-1, 3, पी के वी एस एच-27, सनजेन-85, पीएसी-36, पी ए सी-1091, एम एल एस एफ एच -47, वे बी एस एच-44, फूले रविराज	परो सन-09, एस एच-416
आन्ध्र प्रदेश	डी आर एस एच-1, ए पी एस एच-11, एम एस एफ एच-8, के बी एस एच-1, एम एस एफ एच-17, ज्वालामुखी	मोर्डन, टी एन ए यू एस यू एफ-7, सूर्या, एस एस -56, एल एस-11, डी आर एस एफ-108
तमिलनाडू	डी आर एस एच-1, सनजेन-85, पी ए सी-36, पी ए सी-1091, एम एल एस एफ एच-47, के बी एस एच-44, एन डी एस एच-1, एस एच-416, टी एन ए यू एस एफ एच को-2	मोर्डन, टी एन ए यू एस यू एफ - 7, डी आर एस एफ-108

सारणी - 5 : गैर पारम्परिक क्षेत्रों के लिए सूरजमुखी की संस्तुत प्रजातियॉ और संकर किस्में

राज्य	संकर	प्रजातियॉ
पंजाब	के बी एस एच - 1, पी एस एफ एच-67, ज्वालामुखी, सनजेन-85, पी ए सी-36, पी एस एफ एच-118, के बी एस एच-44	मोर्डन, डी आर एस एफ-108
हरियाणा	के वी एस एच-1, ज्वालामुखी, सनजेन-85, पी ए सी-36, के वी एस एच-44, परो सन-09, एच एस एफ एच-848	मोर्डन, डी आर एस एफ-108
गुजरात	के बी एस एच-1, ज्वालामुखी, सनजेन-85, पी ए सी-36, पी ए सी-1091, एम एल एस एफ एच-47, के बी एस एच-44, एस एच-416	जी ए यू एस यू एफ-15, मोर्डन, डी आर एस एफ-108, टी एन ए यू एस यू एफ-7
अन्य राज्यों	के बी एस एच-1, ज्वालामुखी, सनजेन-85, पी ए सी-36, पी ए सी -1091	--

सारणी - 6 : भिन्न-भिन्न राज्यों के लिए उर्वरकों की संस्तुत मात्रा

राज्य / परिस्थिति	N : P : K की संस्तुत मात्रा	विशेष संस्तुति
आन्ध्र प्रदेश कोस्टल तेलंगाना	40:40:20 30:30:20	--
गुजरात खरीफ सेमी रबी	30:25:0 25:25:0	20-40 कि.ग्रा./हैक्टर उपयोग करें ।
मध्य प्रदेश / छत्तीस गढ़ बारानी क्षेत्र गर्मी	40:30:20 60:40:20	जिंक की कमी बाली मृदा में 25 कि.ग्रा./ हैक्टर जिंक सल्फेट का प्रयोग करें ।
महाराष्ट्र	50:0:0	बुआई के 3 सप्ताह बाद आधी नाइट्रोजन का उपयोग करें एवं बची हुई नाइट्रोजन की मात्रा का उपयोग 6 सप्ताह बाद ।
राजस्थान भारी मृदा हल्की मृदा	20:20:0 40:25:0	जहॉ पर 250 मि.मी. वर्षा हो जाहँ पर 350 मि.मी. से ज्यादा बारिश होती हो ।
उड़ीसा	30:20:30	--
तमिलनाडू सिंचित बारानी	35:23:23 25:15:15	600 ग्राम एजोस्प्रीलीयम से बीजोपचार करें ।
उत्तर प्रदेश/ उत्तराखण्ड	20:10:0	--
हरियाणा	30:0:0	--
बिहार/झारखण्ड़	40:40:0	--
पश्चिम बंगाल सिंचित बारानी	50:25:25 25:13:13	आलू के बाद अगर लि बोये तो उर्वरक नहीं ड़ाले
असम	30:30:20	सारी मात्रा को भूमि में ड़ाले (बुआई के समय)
केरल	30:15:30	बुआई के 30-35 दिन बाद नाइट्रोजन की 75 प्रतिशत मात्रा का बेसल डाले + 25 प्रतिशतका 2 प्रतिशत यूरिया का पर्णीय छिड़काव करें ।

कर्नाटक	37.5:25:25	

फूलों के स्तर पर तिल

कटाई पर तिल

अनुबंध

तिलहन उत्पादन बढ़ाने की तकनीकी

(02-04 January, 2014)

कृषि तकनिकी प्रबन्धन संस्था
नवादा, बिहार

S. No.	Name	Village	Mobile Number	Taluk	District
1	Dilchand Prasad	Bilarpur	8578006954	Sirdala	Nawada
2	Laxman Prasad	Bilarpur	9006699140	Sirdala	Nawada
3	Awadhesh Prasad Sharma	Bilarpur	9931215494	Sirdala	Nawada
4	Umesh Prasad Singh	Rewara	9931629175	Kashichak	Nawada
5	Harinandan Sharma	Bilarpur	7739237766	Sirdala	Nawada
6	Radha Raman Singh	Chandinowen	9973291233	Kashichak	Nawada
7	Ram Vinod Prasad	Nemchak	9546944175	Kashichak	Nawada
8	Parbin Kumar	Khakhri	7654275230	Kashichak	Nawada
9	Pappu Kumar	Nemchak	9931280050	Kashichak	Nawada
10	Sunil Kumar Sharma	Dhewdha	9771056008	(Pakribarawan)	Nawada
11	Sanjay Kumar	Dhewdha	9199894666	(Pakribarawan)	Nawada
12	Upendra Prasad	Nemchak	8409358665	Nawada	Nawada
13	Sachidananda Prasad	Subhanpur	8002355438	Nawada	Nawada
14	Abhay Kumar	Rewara	9631611491	Nawada	Nawada
15	Nageshwar Prasad	Bilarpur	9939527264	Sirdala (Nawada)	Nawada
16	Brhamdev Sharma	Akona	9199904253	Sirdala	Nawada
17	Ravi Ranj Singh	Palatpur	9430007220	Katarisarai	Nalanada (Agriculture Coordinator)

DIRECTORATE OF OILSEEDS RESEARCH
Rajendranagar, Hyderabad-500030

Training course
on
Technologies for increasing oilseeds production
(02-04 January 2014)
Sponsored
by
Agriculture Technology Management Agency, Nawada, Bihar

Course Director: Dr. M. Padmaiah
Course co-Directors: Dr. G.D.Satish Kumar
Dr. H.P. Meena
Dr. Praduman

31-12-2013 (Tuesday)
2100 hrs Arrival of participants from Bihar
01-01-2014 (Wednesday)
0900-1600 hrs: Visit to CRIDA, Hayathnagar Farm

02-01-2014 (Thursday)

0900-0930 hrs:	Registration of participants
0930-1030 hrs:	Inauguration and address on Oilseeds scenario in India vis-à-vis Bihar – Dr. K. S. Varaprasad
1045-1200 hrs:	Technologies for enhancing rapeseed & mustard productivity – Dr. Harvir Singh
1200-1300 hrs:	Improved management practices for sunflower – Dr. Aziz Qureshi and Dr. H.P. Meena
1400-1515 hrs:	Technologies for increasing soybean production – Dr. H.P. Meena
1530-1630 hrs:	Groundnut production technologies for increasing productivity– G.D.Satish Kumar

03-01-2014 (Friday)

0800-1230 hrs:	Visit to ICRISAT– G.D. Satish Kumar and Dr. H.P. Meena
1400-1515 hrs	Improved production technologies for safflower – Dr. N. Mukta and Dr. P. Padmavathi
1530-1630 hrs:	Improved management practices for sesame and linseed – Dr. J. Jawahar (sesame) and Dr. H.P. Meena (linseed)

04-01-2014 (Saturday)

0900-1030 hrs:	Visit to DOR farm – Dr. M. Padmaiah
1045-1130 hrs:	Technologies for increasing castor productivity–Dr. Praduman and Dr. M. Padmaiah
1130-1215 hrs:	Technologies for increasing production of niger– Dr. Praduman
1215-1245 hrs:	Feedback
1345-1445 hrs:	Valedictory function

05-01-2014 (Sunday)
0900 hrs Departure of participants to Bihar

Tea break: 1030-1045 & 1515-1530 hrs; Lunch break 1300-1400 hrs